प्राचीन तीर्थ श्री कापरड़ाजीका सचित्र

इतिहास.

—ज्ञानसुन्दर.

जैन ऐतिहासिक ज्ञान सरोज नं. ५

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर पादपद्मेभ्यो नमः

प्राचीन तीर्थ कापरड़ाजी
का
इतिहास ।

लेखक,
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

प्रकाशक,
जैन ऐतिहासिक ज्ञानभंडार,
जोधपुर-राजपूताना.

प्रथमावृत्ति १००० वीर सं. २४५८
ओसवाल सं. २३८८ विक्रम सं. १९८८

मूल्य पठन-पाठन और सदुपयोग.

प्रबन्धकर्ता—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला

फलोधी (मारवाड़)

द्रव्य सहायकः—

५१) श्री बालाग्राम के पंचों की ओर से

१०१) स्वर्गस्थ श्रीमान् हीराचंदजी गेहलडा (मद्रास वाला) की धर्मपत्नी श्रीमती केवलकुंवरी की ओर से

पुस्तक मिलनेका पता—

एम. श्रीपाल एण्ड कम्पनी

जोधपुर (राजपूताना).

जैन जाति महोदय के लेखक श्री मदुपकेश गच्छीय

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

जन्म वि. सं. १९३७ विजय दशमी. स्थानकवासी दीक्षा वि. सं. १९६३.

जैन दीक्षा वि. सं. १९७२ (ओशीयों.)

Lakshmi Art Bombay, 8.

भूमिका

मारवाड़ की भूमि वीर प्रसूता होने के कारण दूर दूर प्रसिद्ध है। इसकी वीर गाथाओं का इतिहास में ऊंचा स्थान है। इसमें ऐसे ऐसे शूरवीर, धीर, दानी, मानी और अतिशय उदार व्यक्ति हुए कि जिनकी देश सेवा देख कर संसार चकित होजाता है। इसका मुख्य और मूल कारण यही है कि अपने देश के लिये उन लोगोंने हथेली पर जान लेकर उत्तम उत्तम कार्य कर दिखाए जिनके वर्णनों से इतिहास भरे पड़े हैं। मरुधरवासियों की वीरता और साथ ही साथ परोपकारिता इतनी उच्च दर्जे की थी कि जिसकी बराबरी शायद ही संसार की और जाति कर सकती हो। उत्साही योद्धा निर्बलों की सहायतार्थ बलिदान होने को सर्वदा कटिबद्ध रहते थे।

आज से २,९०० वर्ष पहले का इतिहास बतला रहा है कि इस मरुभूमि में जल की इतनी कमी नहीं थी। 'हाकड़ा' नामक झील का मीठाजल चारों ओर फैला हुआ था। पानी की बहुतायत से चारों ओर प्रजा में हर प्रकार की चहल पहल दिखाई देती थी। जिस जगह आज जेसलमेर और बीकानेर बसा हुआ है वहाँ समुद्र था। इसका प्रमाण यह है कि आज भी वहाँ के खोद काम में भीमकाय मच्छों के कलेवर निकलते

हैं। तथा कई प्राचीन कविताओं में इस समुद्र का वर्णन है, यथा—

लाखा जैसा लख गया—ओठा सरीखा अट्ठ।
हेम हडाउ न आवसी—फिरने इण ज वट्ठ।

अर्थात् हेम नामका बनजारा कहता है कि मरुभूमि में माल की इतनी ज्यादा पैदावारी होती थी कि बनजारे लोग लाखों बालदों द्वारा माल ले जाया और लाया करते थे; परन्तु 'हाकडा' नामक समुद्र के कारण उनको बालद लाने और लेजाने में ज्यादा कष्ट होता था। उसने इस तकलीफ को दूर करने के लिये मार्ग में आनेवाले समुद्र को मिट्टी से भर कर जल की जगह थल बना लिया था।

दूसरा प्रमाण यह है कि आज यत्र तत्र गुड़ निकालने की चर्खियों दिखती हैं वे बतलाती है कि यहाँ पानी की प्रचुरता होनी चाहिये। क्योंकि इतना बड़ा गुड़ का कारोबार बिना ज्यादा पानी के कैसे चल सका होगा।

तीसरा कारण यह है कि समुद्र के किनारे ओस (उस) की जगह जमीन पर जो नगर बसाया था उसका नाम उएसपुर रखा गया था। संस्कृत के लेखकोंने उसे उपकेशपुर कहा जो अपभ्रंश होकर आज ओशियाँ कहा जाता है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि ओशियाँ के पास ही समुद्र मौजूद था और अनेक बहु मूल्य पदार्थों की उपज के कारण यह प्रान्त हरा भरा

गुलजार था। समुद्र के दूर चले जाने से तले की रेत रह गई जो रेगिस्तान की तरह हो गई। जिसको आज थली कहते हैं।

ऐतिहासिक अनुसंधान से मालूम हुआ है कि पूर्व जमाने में यहाँ पँवारों का राज्य था। प्रसिद्ध भी है—" पृथ्वी तणा पँवार, पृथ्वी पँवारों तणी "

जिस प्रकार यह प्रान्त धनधान्य व जन समुदाय से बढ़ा चढ़ा परिपूर्ण था उसी तरह सदुपदेश के अभाव के कारण धर्म से पतित भी था। क्योंकि वाममार्गियों का यहाँ बड़ा ज़ोर शोर था। राजा और प्रजा सब के सब देवी के उपासक माँसभक्षक और पियक्कड बन गये थे। व्यभिचार का भी बड़ा प्रचार हो गया था। रसना लोलुपी स्वार्थी मठधारियोंने दुराचार ऐशआराम और हराम के काम करने के लिये कम्मर कस उतारू हो गये थे हिंसा के किले को इतना दृढ बना लिया था कि किसी का इतना साहस नहीं था कि चूँ तक भी कहे या सर उठावे।

आज से लगभग २३८८ वर्ष पहले भगवान् पार्श्वनाथ के छट्ठे पट्टधर आचार्य श्री रत्नप्रभसूरि अपनी शिष्य मंडली सहित अनेकानेक कठिनाइयों को सहन करते हुए तथा विविध उपसर्गों और परिसहों को बरदास्त करते हुए इस मरुभूमि के केन्द्र नगर उपकेशपुर[1] में पधारे। क्योंकि डाल पत्तों की अपेक्षा मूल का ही सुधार करना श्रेयस्कर है। आपश्रीने अपनी कठिन तपश्चर्या व आत्मबल के प्रभाव व पराक्रम से उस नगरी के अन्दर के ३८४००० घरों के निवासियों को जैन धर्म की शिक्षा दिक्षा दे

---

१ उस समय उपकेशपुरमें पांच लाख घरों की वस्ती थी.

जैनी बनाया । वहाँ के लोगों के आत्मतंतु वर्ण, जाति और उपजाति के ऊँच और नीच के भेदभाव तथा मिथ्या रूढियों के कारण छिन्न भिन्न व जर्जर बन चुके थे, उनको संजीवक सम्यक्दृष्टि बना कर ' महाजन संघ ' नामक संस्था में एकत्र कर बुझते हुए दीपक को फिर से तेज़ किया जिससे बिखरे हुए लोगों का ज़ोरदार संगठन हो गया । सब लोग अहिंसा के झंडे के नीचे आकर साम्यवादी हुए । सूरीश्वरने उनके आत्मकल्याण के हेतु शासनाधीश चरम तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा[१] करवाई । वह मन्दिर अब तक मौजूद है । आचार्य रत्नप्रभसूरि तथा उनकी दिग्विजयी शिष्यमंडलीने मारवाड़ प्रान्त के कोने कोने में घूम कर मिथ्यात्व, दुराचार और कुरूढियों को समूलनष्ट कर साम्यवाद, शांति, संगठन और सदाचार का साम्राज्य स्थापित किया । सूरिजी का यह प्रयास असीम उपयोगी हुआ । क्यों न हो ? जिन लोगोंने परोपकार के लिये जीवन बलिदान करना ही अपना उद्देश्य बना लिया हो उनके लिये यह कार्य करना सर्वथा शक्य और संभव था ।

महाजन संघ की नींव उदारता पर थी अतः संघ की खूब अभिवृद्धि हुई । विक्रम की चौथी और पांचमी शताब्दी तक तो संघ का क्षेत्र प्रायः मारवाड़ में ही रहा परन्तु बाद में जब महाजन लोग व्यापारार्थ देश देशान्तरों में आने जाने लगे तब से अन्य प्रान्तों में भी अपनी दुकानें जमाने लगे दूसरा यह भी

१ इस प्रतिष्ठा का समय वीर निर्वाण के पश्चात् ७० वर्ष का था.

श्री केशरीयानाथ भगवान्

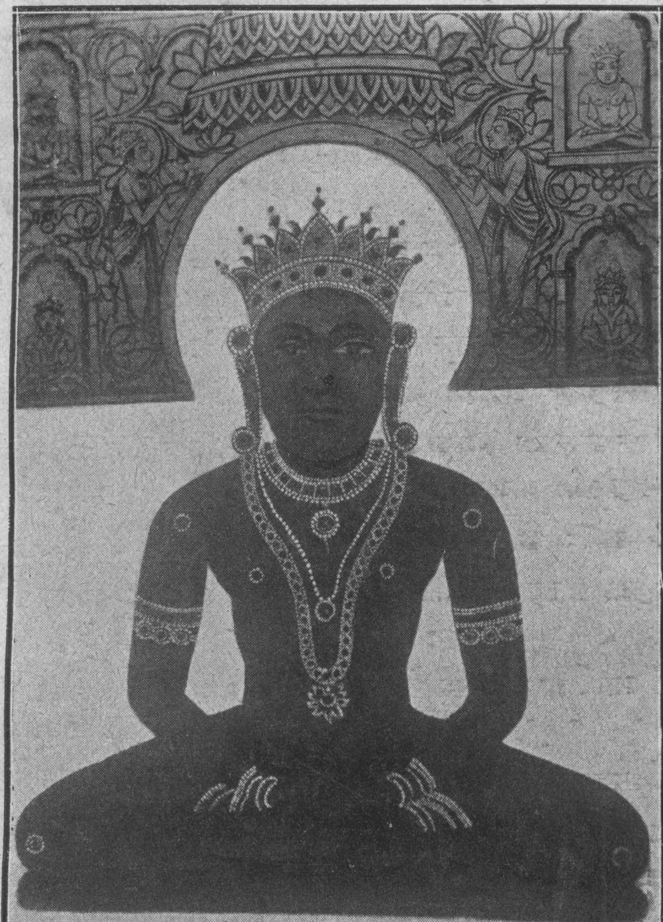

नगर धूलेवे आप विराजो, महिमा अपरंपार ।
ज्ञान 'गुण' जिन चरणमें, भवोदधि पार उतार ॥

आनंद प्री. प्रेस–भावनगर.

कारण हुआ कि भीनमाल के राजा तोरमण, जिसने जैनाचार्य हरिगुप्त के उपदेश से भीनमाल में भगवान् ऋषभदेवजी का मन्दिर बनाया था, के उत्तराधिकारी 'महरगुल' ने महाजन संघ पर जुल्म करना शुरु किया। तब विवश होकर कितने ही महाजन लोगों को मारवाड़ प्रान्त छोड़ कर लाट, गुजरात आदि प्रान्तों में जा कर बसना पड़ा। उसी समय से मारवाड़ के महाजन भिन्न भिन्न प्रान्तों में जाकर अपना निवासस्थान वहीं बनाने लगे। महाजनों के साथ साथ किसान और अन्य मज़दूर भी मारवाड़ छोड़कर अन्य प्रान्तों में जाने लग गये। यही कारण है कि मारवाड़ का शिल्प-उद्योग और कृषिकार्य घटने लग गया जो घटते घटते आज नहीं के बराबर हो गया है।

प्रसंगोपात मारवाड़ में जैन धर्म का प्रचार और महाजन संघ की स्थापना तथा अन्य प्रान्तों में महाजन लोगों के जानेका संक्षिप्त हाल ऊपर दिखाया गया है। मारवाड़ ही जैन जातियों की उत्पत्ति का मूल स्थान है यह अब निसंदेहपूर्वक सिद्ध हो चुका है। जैन भविकोंने अपने आत्महित साधन के लाभार्थ धर्म के स्तम्भ रूप कई स्थानों पर लाखों और क्रोडों रुपयों का द्रव्य खर्च कर जिन मन्दिर बनवाए जो इस गये बीते जमाने में जैन धर्म की जाहोजलाली की साक्षी दे रहे हैं। असंगत न होगा यदि इस स्थान पर जिनमन्दिरों व तीर्थों की एक तालिका पाठकों के सूचनार्थ यहाँ दर्ज कर दी जाय। आशा है पाठक समय समय पर इन तीर्थों की यात्रा कर अपने जीवन को सुखी और धार्मिक बनावेंगे।

मारवाड़के तीर्थ.

१ उपकेशपुर पट्टन—जिसे आज ओशियाँ नगरी कहते हैं। यहाँ श्री महावीर प्रभु का प्राचीन तीर्थ है। आचार्य रत्न-प्रभ सूरि के करकमलों से इसकी प्रतिष्टा हुई। प्रतिष्टा हुए आज २३८८ वर्ष हुए हैं। प्रतिवर्ष फाल्गुन शुक्ला ३ को यहाँ पाट उत्सव का मेला भरता है। यहाँ पिछले १९ वर्षों से एक विद्या-लय बोर्डिंग सहित अच्छी तरह से चल रहा है।

२ कोरण्टपुर पट्टन—जिसे आज कोरटा कहते हैं। यहाँ श्री महावीर स्वामी का प्राचीन तीर्थ है। आचार्य श्री रत्नप्रभ सूरि के करकमलों से उपकेशपुर पट्टन तथा कोरंटपुर पट्टन में एक साथ ही प्रतिष्टा हुई थी। प्रतिवर्ष कार्तिक शुक्ला १९ को मेला भरता है।

३ माण्डव्यपुर—जिसको आज मंडोवर या मंडोर कहते हैं। यहाँ किले में एक प्राचीन मन्दिर टूटी फूटी दशा में इस समय मौजूद है। यह भी करीब २४०० वर्ष का पुराना है।

४ तिंवरी—यहाँ भी एक प्राचीन मन्दिर है जो जमीन से निकला हुआ है। अनुमान होता है कि यह भी ओशियां के मन्दिर के साथ बना हुआ है।

५ नागपुर—इसे लगभग २००० वर्ष पहले नागवांशी-योंने बसाया था। यह अब नागौर के नाम से मशहूर है। उप-केशगच्छ चारित्र से पता मिलता है कि आचार्य देवगुप्तसूरिने

राजा और प्रधानने संख्यातीत कुटुंबियोंके साथ सूरिजीके वासक्षेपसे जैन धर्म अंगीकार कीया, और महाजन वंशकि स्थापना हुई, वंदनार्थ आए हुए देव विद्याधरोंने पुष्प वृष्टि की। (पृ ७२)

नागपुर के निवासी नारायण सेठ को प्रतिबोध दे जैनी बनाया था जिसने नागोर के किले में जिन मन्दिर बनाया था। नगर में एक बड़ा मन्दिर के नामसे विख्यात मन्दिर है। यह मन्दिर चोरड़िया के खानदानी वीर भैंशाशाहने बनाया था। सर्व धातुमय विशाल और मनोहर मूर्त्ति बहुत ही प्राचीन है।

६ **लोद्रव पट्टन**—यहाँ चिंतामणि पार्श्वनाथ का अति पुराना मन्दिर तीर्थ स्वरूप है। प्राचीन काल में यहाँ ब्राह्मणों का खूब जोर था। उपकेशगच्छीय जम्बुनागमुनिने उनसे शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त कर यहाँ कई जैन मन्दिर बनाकर जैन धर्म का झंडा फहराया था। लोद्रवा के पास ही वि. सं. १२१२ में जेसलमेर नामक नगर बसाया गया था। यहाँ पर किल्ला के अंदर ८ मन्दिर हैं। अनेक यात्री संघ सहित इस तीर्थ की यात्रार्थ आते हैं। फलोधी और बाडमेर से यात्रियों को मोटर मिल सकती है।

७ **जाबलीपुर**—(जालोर)—यह प्राचीन नगर भी इतिहास–प्रसिद्ध है। यहाँ कई प्राचीन मन्दिर हैं। महाराजा कुमारपालने सुवर्णगिरि क़िलेमें एक भव्य मन्दिर बनवाया तथा उसकी प्रतिष्टा कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्र सूरिसे करवाई। दो मन्दिर किलेमें और भी प्राचीन हैं।

८ **फलवृद्धि**—जिसे आज कल मेड़ता रोड–फलोधी कहते हैं। यहाँ पार्श्वनाथ भगवान् की मूर्त्ति बेलु रेती और गौ दुग्ध मिश्रित बनी है। यह मूर्त्ति अति चमत्कारी जमीन से प्रकट हुई है। वि. सं. ११८१ में आचार्य धर्मघोष सूरि ५०० मुनियों

सहित फलवृद्धि चतुर्मास रहे थे । इससे अनुमान होता है कि फलोधी नगरमें उस समय हजारों घर जैनियों के होंगे। उक्त सूरीश्वरजी के करकमलों से गरुड जाति के पार्श्व श्रेष्टिने उसी वर्ष इस मन्दिर की प्रतिष्टा करवाई । शेष कार्य नागौर के श्रीमानोंने करवाया । वि. सं. १२०४ में आचार्य वादी देवसूरि से पुनः यह मन्दिर प्रतिष्ठित हुआ । प्रतिवर्ष यहाँ आश्विन कृष्ण १० मी का बड़ा मेला भरता है ।

९ मेड़ता—यह भी प्राचीन नगर है । यहाँ जैनों की हजारों घरों की बस्ती थी जिसके स्मारक भव्य और मनोहर १४ मन्दिर आज भी विद्यमान हैं । एक बावन जिनालय मन्दिर तोड़ कर मुसलमानोंने अपनी मसजिद बनाली है ।

१० नारदपुरी—इसे अब नाडोल कहते हैं । जहाँ महा राजा सम्प्रति का कराया हुआ श्री पद्मप्रभु का मन्दिर है । यहा का श्री नेमिनाथ भगवान् का मन्दिर उससे भी पुराना है । आचार्य मानदेव सूरिने यहाँ लघु शांति की रचना की थी जिससे शाकम्भरी (शांभर) के संघ के उपसर्ग को शांत किया था । नाडोल के राव लाखण के अनुज राव दुद्धजी को आचार्य श्री यशोदेवसूरिने प्रतिबोध दे जैन बनाए । दुद्धजी की संतान आज भंडारी खांप के नाम से लोक प्रसिद्ध है ।

११ नाडुलाई—यहाँ शत्रुञ्जय और गिरनार नामकी दो छोटी पहाडियों हैं । आचार्य यशोदेवसूरि अपने विद्याबल से

महोवासे एक आदीश्वर भगवान् का मन्दिर उडाकर यहाँ लाए। यहाँ भी प्रति वर्ष एक मेला भरता है।

१२ वरकाणा—यहाँ का मन्दिर भी प्राचीन है। यहाँ प्रति वर्ष पोष कृष्ण १० का बड़ा भारी मेला भरता है। क्योंकि यह तीर्थ गोडवाड़ प्रान्तका केन्द्र है। यहाँ का पार्श्वनाथ जैन विद्यालय अच्छी तरक्की पर है। गोडवाड़ प्रान्त में शिक्षा प्रचारकी यह उत्तम और प्रथम संस्था है।

१३ घाणेराव—यहाँ से थोड़ी दूर पर मूछाला महावीरजी का धाम तीर्थ है। गाँव में भी कई विशाल मन्दिर हैं। यहाँ प्रति वर्ष कार्तिक शुक्ला १९ का बड़ा मेला भरता है।

१४ राणकपुर—यह तीर्थ मारवाड़ की सादड़ी से ६ मील दूर अरावली पहाड़ियों की घाटियों में प्राकृतिक छटासे अति शोभायमान है। इस तीर्थ की विशेष प्रसिद्धिका कारण इस की आश्चर्य जनक भीमकाय इमारत है। भारतवर्ष में यह अपनी सानी का एक ही मन्दिर है। इसकी बनावट को देखकर दर्शक चकित रह जाते हैं। अगर आपने अबतक इस तीर्थ के दर्शन का लाभ न उठाया हो तो मैं अनुरोध करूँगा कि आप एकबार अवश्य पधारकर अपने मानव जीवनको सफल कीजिये। चैत्र कृष्णा ८ का बड़ा मेला भरता है। इस तीर्थ की यात्रार्थ दूर दूर से यात्री आते हैं। यह मारवाड़ के तीर्थों का नायक कहा जाय तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। कारण इसका नामही त्रैलोक दीपक है।

१५ रातामहावीरजी—यह बीजापुर के पास एक प्राचीन तीर्थ है। पहले यह हथूडी नामक राठोडों के अधिकार में एक विशाल नगरी थी। पूर्वाचार्यों ने उन राठोडों को जैनी बनाया था जिनके वंशज आज गोडवाड़ प्रान्त में हथुडिये राठौड जैन नाम से प्रसिद्ध हैं।

१६ नाकोडा पार्श्वनाथ—यह मेवानगर नामक अति प्राचीन नगर था जहाँ जैनियों की अच्छी आबादी थी। इस समय यहाँ सिर्फ तीन प्राचीन मन्दिर मौजूद हैं। यह बालोतरेसे ६ मील की दूरी पर स्थित है। यहाँ हर साल पौष कृष्णा १० का मेला भरता है।

१७ पाली—यह प्राचीन नगर पहले व्यापार का बड़ा केन्द्र था। नवलखा पार्श्वनाथजी का मन्दिर बहुत प्राचीन समय का है। इस के सिवाय भाखरी पर और नगर में ६ मन्दिर हैं।

१८ सोजत—यहभी प्राचीन नगर है जहाँ कई प्राचीन मन्दिर हैं।

१६ अजमेर—यह चौहानोंकी पुरानी राजधानी है। राज-स्थान का केन्द्र है। यहाँ भी जैनों के तीर्थ रूप प्राचीन मन्दिर हैं।

२० जोधपुर—इसे वि. सं. १५१५ में राव जोधाजीने बसाया है। यहाँ जैनियों के १० मन्दिर हैं।

२१ बीकानेर—यह वि. सं. १५४१ में बीकाजी से

बसाया गया। यहाँ जैनियोंके २८ मन्दिर हैं। जिनमें भडासरजी का मन्दिर विशेष दर्शनीय है।

२२ बीलाड़ा—यह प्राचीन नगर है, जहाँ बलराजा की राजधानी थी। यहाँ जैनियों के ९ मन्दिर हैं।

२३ पीपाड़—यह पीपाडों द्वारा बसाया गया था। यहां एक मन्दिर प्राचीन है तथा दूसरा तालाब के किनारे श्री शांतिनाथ जिनालय अति विशाल है।

२४ जेतारण—यह भी बड़ा प्राचीन नगर है यहाँ चार मन्दिर हैं। तथा नगर के बाहर का मन्दिर अति विशाल है। आश्विन शुक्ला १५ का मेला भरता है।

२५ फलोधी—प्राचीन समय में यह नगर विजयपुर पट्टन के नाम से प्रसिद्ध था। यहाँ ६ जिनमन्दिर हैं।

२६ खौड—इस छोटे से ग्राम में दो जिनालय हैं। श्री आदीश्वर भगवान् का मन्दिर बहुत विशाल है।

२७ केर्कोद—यह प्राचीन स्थान है जहाँ एक प्राचीन जिनालय है।

२८ मुडारा—यह चंडावल से चार मील की दूरी पर है। यहाँ प्राचीन और विशाल जिनालय है।

२९ गोडवाड प्रान्त—सेवाड़ी, सांडेराव, बूया, बाली, सेसली, मुण्डारा, खुडाला आदि अनेक ग्राम, कसबों और

शहरों में प्राचीन जिनमन्दिर विद्यमान हैं, जो महाराजा सम्प्रति और गन्धर्व शालीवाहन के समय के बने हुए हैं ।

३० सीरोही प्रान्त—नाणा, बेड़ा, नांदिया, नातोड़ा, पिण्डवाड़ा, रोहिड़ा, मुंगेरा, चन्द्रावती और सीरोही नगर में बड़े बड़े विशाल और प्राचीन जिनमन्दिर मौजूद हैं । तथा अर्बुदगिरि (Mount Abu) के देलवाड़ा और अचलगढ़ के तीर्थ तो विश्वविख्यात हैं ही ।

३१ सांचोर, भीनमाल और गढ़ सीवाना—इन में तथा मारवाड़ के और प्रसिद्ध २ नगरों व आसपास के गाँवों में कई प्राचीन तीर्थ हैं सबका वर्णन तो एक स्वतंत्र ग्रंथ में ही शक्य है । मारवाड़ के तीर्थों की पूरी डाइरेक्टरी तैयार करना परम और प्रथम जरूरी है ।

नोट—इस संक्षिप्त परिचय में सब तीर्थों के नाम देना कठिन था । अवकाश मिलने पर अलग पुस्तक इस विषय की तैयार करने का प्रयत्न किया जायगा ।

कापरड़ा—यह तीर्थ अति प्राचीन है, इसका विस्तृत इतिहास आगे के पृष्ठों में दर्ज किया जाता है । आशा है पाठक इस पुस्तक को पढ़ कर इस तीर्थ के महत्व को समझेंगे और यहाँ की यात्रा कर अपूर्व लाभ के भागी बनेंगे । शुभम्

जोधपुर
११-८-३१

लेखक—
मुनि ज्ञानसुन्दर

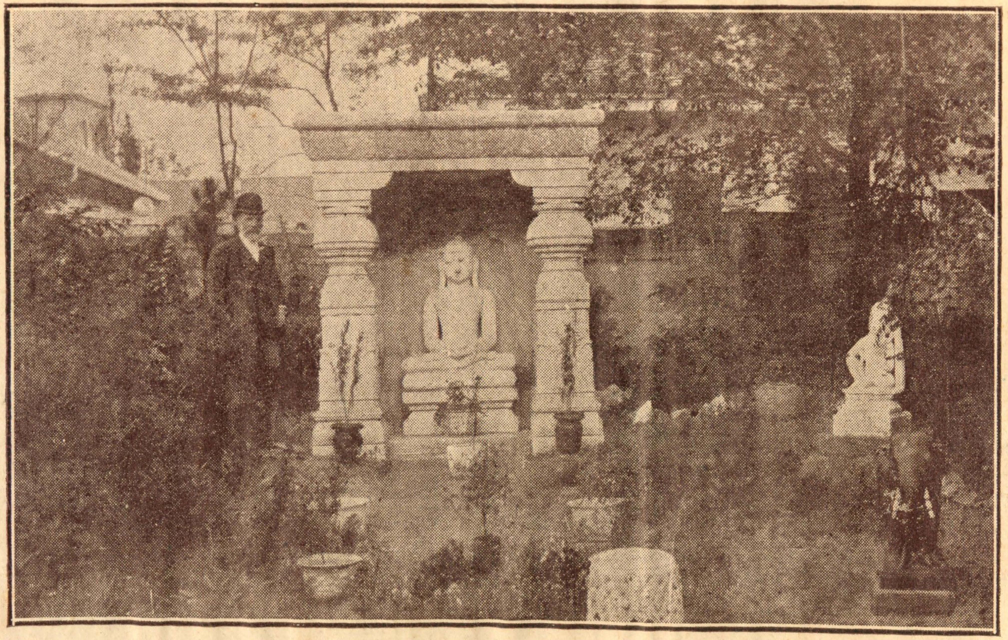

अष्ट्रीयाके अन्तर्गत हंगरी प्रान्त के बुदापेस्त शहरमें एक अंग्रेज के बगेचेमें खोदकाम करते समय प्राप्तहुई प्राचीन महावीर प्रभुकी मूर्ति।

Lakshmi Art Bombay, 8.

ऐतिहासिक दृष्टि से वर्णित

प्राचीन तीर्थ

कापरड़ा.

प्रिय पाठक वृन्द ! आइए मैं आज आपको एक ऐसे दर्शनीय स्थान की सैर कराऊँ जिसे देख कर अवश्य आपका चित्त प्रसन्न होगा । इस पुनीत तीर्थ के अवलोकन करने से आपके हृदय में अपूर्व धार्मिक भावनाएँ उत्पन्न होंगी । प्रारम्भ ही में मैं यह अपील करना चाहता हूँ कि इस ट्रेक्ट को आप एक बार शुरू से लेकर अन्त तक पढ़ जाइये । यद्यपि इसमें आपका अमूल्य समय तो अवश्य खर्च होगा परन्तु इस प्राचीन तीर्थ के इतिहास के जानने से आपको असीम हर्ष उत्पन्न होगा । वास्तविक अनुभव तो इस तीर्थ को भेटने से ही प्राप्त होगा तथापि इस पुस्तक को पढ़ने से आपको यात्रा के अवसर पर कई गुना अधिक आनन्द प्राप्त होगा ।

भारतवर्ष के वक्षस्थल में स्थित राजपूताने की वीरता की गाथा कहाँ नहीं गाई जाती ? उसी प्रसिद्ध प्रान्त के अन्तर्गत मारवाड़ है जिसे मरुस्थल अथवा मरुभूमि कहते हैं ।

इस वीर-भूमि पर एक एक से बढ़ कर वीर, धीर और धुरंधर नररत्न हुए जिन्होंने ऐसे ऐसे चोखे और अनोखे कार्य कर दिखाये कि कदाचित ही कहीं और प्रान्त के निवासियोंने कर दिखायें हो। अर्वाचीन और प्राचीन इतिहास इस बात को सुवर्णाक्षरों में दिखा रहे हैं। पिछली शताब्दियों में मार-वाड़ की सीमा बहुत विस्तृत थी। वर्तमान समय में मारवाड़ राज्य का क्षेत्रफल ३५,०१६ वर्गमील है और जनसंख्या १८,४१,६४२ है। आरावली पहाड़ी की नैसर्गिक छटा भी निहारने योग्य है।

वह यही भूमि है जहाँ महाजन संघ (ओसवाल, पोर-वाल और श्रीमाल आदि जातियों) की उत्पत्ति उपकेश गच्छाधिप आचार्य रत्नप्रभसूरि द्वारा हुई है। मारवाड़ प्रान्त के निवासियों का रहन-सहन, खान-पान, आचार-व्यवहार, रीति-नीति, जल-वायु तथा उदारता और वीरता आज पर्यंत

---

१ मुगल (राज) काल में मारवाड़ में लगभग आधा वर्तमान राजपूताना प्रान्त सम्मिलित था। २ मारवाड़ का क्षेत्रफल आयरलेंड और स्काटलेंड से बड़ा है। ३ हिन्दू १९,८३,३९४ मुसलमान १,९४,४०९ जैन १,०३,१०९ [श्वेताम्बरी ७१,६६० स्थान० [ढूँढीया] २०,४४९ तेरहपन्थी ५,८४४ दिगम्बरी ४,१९६] लामजहब ६,९७७, ईसाई २९९ आर्यसमाजी ४८८ पारसी ९२ सिक्ख १६. (सन् १९२१ में)

दूर दूर विख्यात है। पुराने ज़माने में इस की राजधानी मंडोवर में थी परन्तु इस समय जोधपुर में है। इस नगर को राव जोधाजीने ता० १२ मई सन् १४५८ को बसाया है। इस राज्य के २२ विभाग हैं। प्रत्येक विभाग परगना कहा जाता है। उन परगनों में बीलाड़ा एक महत्वशाली परगना है जिस का केन्द्र बीलाड़ा नगर है।

यह तीर्थ इस परगने के गौरवकी वृद्धि कर रहा है। यह तीर्थ जोधपुर नगर से २८ मील की दूरी पर है। वहाँ पहुँचने के लिये प्रतिदिन जोधपुर से सीधी मोटर कापरड़ा जाती है। यदि रेल्वे से जाना चाहें तो स्टेशन पीपाड़ सीटी से यह स्थान ८ मील दूर है और सेलारी से केवल ५ मील की दूरी पर ही स्थित है।

इस समय कापरड़ा एक छोटासा ग्राम है। परन्तु पहले यहाँ घनी आबादी थी। कापरड़ा नगर अपनी अधिक बस्ती के कारण दूर दूर प्रसिद्ध था। दूर की बात नहीं, विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी में यहाँ पर ५०० घर तो केवल ओसवालों के ही थे। संभव है जहाँ जैनियों की इतनी बड़ी संख्या थी वहाँ कई जिनमन्दिर और उपाश्रय भी होंगे। इसका प्रमाण यह है कि यहाँ की भूमि से स्वयंभू पार्श्वनाथ भगवान् की मूर्त्ति प्राप्त हुई थी। इस से इस बातका अनुमान लगाया जा सकता है कि कदाचित यवनों के अत्याचारों और आक्र-

मणों से रक्षित रखने के लिये ये बिंब भूमि में सुरक्षित रखे गये हों। मूर्त्तियों तो इस प्रकार सुरक्षित की जा सकी होंगी पर मन्दिर तो अवश्य विधर्मियों द्वारा नष्ट भ्रष्ट कर दिये गये होंगे। जो कुछ भी हुआ हो जिन–प्रतिमा के प्रकट होने से यह तो सर्वथा विश्वसनीय है कि यहाँ जैनियों की बस्ती ज़रूर थी। यह तो कदापि सम्भव नहीं है कि जिस नगर में जैनियों के ५०० से अधिक घरों की आबादी हो वहाँ उनके आत्म-कल्याण के सुगम साधनरूप मंदिर और उपाश्रय न हों। अर्थात् पुराने ज़माने में यहाँ कई मन्दिर उपाश्रय अवश्य थे।

प्राचीन काल में यह नगर अच्छी तरक्की पर था यहाँ की प्राकृतिक शोभा भी निहारने योग्य थी। नगर चारों ओर से हराभरा और गुलज़ार दिखाई देता था। क्यों न हो जहाँ धनाढ्यों की बसती हो वहाँ इन बातों की क्या कमी ? व्यापार में इस नगर का अच्छा हाथ था। इसके अतिरिक्त रंगाई के कार्य के कारबार में तो यह प्रमुख और प्रसिद्ध था। नमक भी यहां गहरी तादाद में तैयार होता था। यहां नमक एक विशेष प्रकार का होता था जिस की उपादेयता के कारण बहुत मांग रहती थी। यहां का नमक बनजारोंकी बालद द्वारा बहुत दूर दूर तक पहुंचता था। नमक के अतिरिक्त कृषि कला में भी यह नगर पिछड़ा नहीं था। यहां के खारचिये गेहूँ तो विशेषतया प्रसिद्ध थे। नगर की घनी आबादी के कारण तीन थे जो ऊपर बताए जा चुके हैं; परन्तु चतुर्थ कारण भी बड़ा था।

वह यह था कि इस नगरमें व्यापारियों और जनता की सुविधा के लिये प्रति वर्ष १ बड़ा मेला भरता था जिसमें लाखों रुपयों का क्रयविक्रय और परिवर्तन होता था। यह मेला इतना बड़ा भारी होता था कि इसके लिये एक पूरा महीना नियुक्त था। मेले के एक मास पहले ही खूब तैयारियें की जाती थीं। इस मेलेके कारण ही प्रति वर्ष यहांका कारबार और रोजगार बढ़ रहा था।

प्राचीन समय में इस नगर में कितने धर्म स्थान (मन्दिर और उपाश्रय) थे यह तो मालूम नहीं है परन्तु इस समय स्वयंभू पार्श्वनाथ भगवान् के मंदिर के अतिरिक्त दो उपाश्रय मौजूद हैं। यत्र तत्र प्राचीन खंडहर भी दिखलाई दे रहे हैं। जिस नगर में जैनियों के सैंकडों घर थे वहां महात्मा और यतियों के ठहरने के लिये कई पोशालों तथा उपाश्रय और उनके साथ जिनालय भी ज़रूर होंगे। जब यवनोंने धर्मांधता के कारण मन्दिरों पर कुठाराघात किया होगा तब यति महात्माओंने मन्दिरों से जिन बिंब लाकर अवश्य अपने उपाश्रयों में स्थापित किये होंगे। क्योंकि जैनियोंने आत्मकल्याण के लिये यह अनिवार्य समझा था कि प्रतिदिन प्रभु दर्शन करके ही अन्न जल ग्रहण करना चाहिये। यह प्रतिज्ञा इस समयमें भी चली आ रही है। सैंकड़ों नहीं हज़ारों जैनी ऐसे मौजूद हैं जो भोजन करना तो दूर रहा बिना भगवान् के दर्शन किये मुंह में पानी भी नहीं डालते। धार्मिक लगन को हृदय में सदा जारी रखने के ऐसे सरल उपाय को वे कब त्याग सकते है!

कापरड़ाजी का विशाल मन्दिर-

जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंहजी के शासन काल में भण्डारी-कुल-भूषण भानुमल्लजी जेतारण की हकूमत के हाकिम नियुक्त थे। भंडारीजी पक्के जैनी थे। ये गुणों के आगार थे। धर्मज्ञ--नीतिज्ञ-वीर--उदार--कार्यकुशल होने के अतिरिक्त ये दृढ़व्रती, प्रतिज्ञापालक और सच्चे स्वामीभक्त भी थे। यद्यपि ये इतने उच्च पद पर अधिकारी थे तथापि अभिमान तो इन्हे छू तक भी न गया था। कूट नीतिज्ञता इनसे कोसों दूर थी। ये शान्त और राज्य-प्रजा हितचिन्तक थे। इनके द्वारा जनता की निरन्तर भलाई हुई जिसके फलस्वरूप इन्हें आशीर्वाद प्राप्त होता था। राज्य कार्य में संलग्न रहते हुए भी ये धार्मिक आवश्यक कार्य के बड़े दृढ़ थे। शुभ कार्यों और नेक पुरुषों के मार्ग में बाधाएं आती हैं यह तो एक कलिकाल की कठिन कसौटी मात्र है। तदनुसार किसी चुगलने दरबार के पास जाकर इनके विषय में मिथ्या बातें कहीं। उस दुष्ट चुगलखोर की चिकनी चुपडी बातों पर महाराजने विश्वास कर लिया। फिर क्या था। तुरन्त आज्ञा हुई कि भंडारी को पकड़ कर लाओ और यहां ज़ल्दी पेश करो। आज्ञा देते समय कुछ भी सोच विचार नहीं किया गया। सत्ता के नशे में ऐसी त्रुटियें हो जाना सम्भव

हैं। उनके मुंह से हुक्म निकलने की देर थी कि यमदूतों का सा एक समुदाय भंडारीजी को पकड़ लाने के लिये चल दिया जहां मनमाना आधिपत्य का साम्राज्य हो वहां जो कुछ न हो जाय वही थोड़ा है। उन दूतोंने जेतारन पहूँचकर भंडारीजी को दरबारी आज्ञा सुनाई। शत्रुओंने तो कल्पना के क़िले बांधे थे कि भंडारी चलने से आनाकानी करेगा तो ऐसा करेंगे वैसा करेंगे परन्तु धीर भानुमल्ल ऐसी आक्समिक आज्ञा से कब डरने वाले थे। वे तुरन्त चलने को तत्पर हो गये। और निर्भीकता पूर्वक कहने लगे कि मुझे इस बात की परम प्रसन्नता है कि हुजूरने मुझे याद किया है।

प्रातःकाल भंडारीजी रवाने हुए। दिन चढ़ने लगा। सब को क्षुधाने आ सताया। इतने ही में सामने कापरड़ा नगर का विशाल तालाब दिखाई दिया जो निर्मल जल से परिपूर्ण-हरे, भरे, गुलज़ार नगर की शोभा को द्विगुणित बढ़ा रहा था। भंडारीजी की आज्ञा से सबने उसी तालाब की तीर पर सघन वृक्षों की छाया में डेरा डाला। भंडारीजी के साथ जो लोग आए थे उन्हों ने स्नान कर रास्ते के श्रम को दूर किया तत्पश्चात् वे सब भंडारीजी के पास आकर अनुरोध करने लगे कि भंडारीजी, पधारिये भोजन कीजिये।

भंडारीजी—" आप सब सरदार भोजन कर लीजिये—मैं इस समय भोजन नहीं कर सकता "।

सरदार लोग—" इसका क्या कारण है ? यह कैसे हो कि आप तो भूखे रहें और हम भोजन करलें "।

" मैं जैनी हूँ। मैंने जीवनभर के लिये प्रतिज्ञा ली है कि बिना भगवान् के दर्शन किये किसी दिन अन्नजल ग्रहण नहीं करूँगा। यह केवल मेरा ही नहीं पर संसार के प्राणी मात्र का कर्त्तव्य है कि वह अपने इष्ट देव का दर्शन और उपासना करने के बाद ही भोजन करे।

" भंडारीसा, जब आप दौरे में पधारते हैं उस समय जहाँ मन्दिर नहीं होता है तब आप क्या भोजन नहीं करते?"

" कदापि नहीं। प्रथम तो ऐसा कोई स्थान ही नहीं कि जहाँ महाजनों की बस्ती हो और वहाँ मन्दिर न हो। इतने पर भी कदाचित कहीं पर मन्दिर दो या चार मील की दूरी पर हो तो मैं वहाँ जाकर दर्शन कर लिया करता हूँ और जब मुझे ऐसे प्रान्त में दौरा करना होता है कि जहाँ आसपास में मन्दिर होने की संभावना नहीं हो तो मैं अपनी सेवा साथ में ले लेता हूँ। चाहे मेरे प्राण भले ही चले जाँय पर मैं अपनी प्रतिज्ञा को कभी नहीं तोड़ सकता "।

" भंडारी सा—कदाचित् कभी ऐसा भी संयोग हो जाय कि जहाँ आसपास में मन्दिर भी न हो और आपके पास सेवा भी न हो तो क्या आप भूखे रहेंगे।

" सरदारो—क्या आपने नहीं सुना मैं पहले आपको

बता चुका हूँ कि " प्राण जाय पर वचन न जाहिं "। सत्य की कसौटी तो अवसर आने पर ही होती है। मुझे तो ऐसा अवसर कभी कभी मिलता है परन्तु धन्य है उन मुनि और महात्मा पुरुषों को जो इस से भी कठिनतर परिषहों और उपसर्गों को सहर्ष सहन करलेते हैं। सरदारो? मनुष्य तो क्या पर पशु भी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहते हैं—कई महापुरुषों का भी यही कहना है—

" महावीर का यह फरमाना—सत रहता हो प्राण गँवाना।
भंग प्रतिज्ञा लेकर करना—इससे तो बहतर है मरना "।

× × ×

" रघुकुल रीति सदा चली आई—
प्राण जाय पुनि वचन न जाई " तुलसी—

× × ×

" सत मत छोड़ो ए नरो—सत छोड़े पत जाय।
सत की दासी लक्ष्मी—और मिलेगी आय "।

सोचो किस प्रणवीर को कष्ट न सहना पड़ा। हरिश्चन्द्र को इसी हित डोम के घर बिकना पड़ा। रामचन्द्रजी को इसी लिये १४ वर्ष का बनवास भुगतना पड़ा। सत्य रक्षणार्थ पाण्डवोंने कौन से कष्ट न सहे? महा सती सीता को भी इसी हेतु धधकती अग्नि में कूदना पड़ा। इत्यादि अनेक उदाहरण याद कर लीजिये। जिसने सत्य छोड़ा समझिये जीवन से हाथ धोया।

भंडारीजी के इन ठोस वचनों को सुनकर उनके हृदय-पर पूरा प्रभाव पड़ा। जो इससे पहले भंडारीजी को बद्-नीयत से देखते थे वे ही इन्हें पूज्य दृष्टि से निहारने लगे। उन्हें यह विश्वास हो गया कि इन दृढ़ प्रतिज्ञ पुरुष का हर्गिज बाल बांका न होगा। भंडारीजी की सत्य निष्ठा से दरबार का क्षणिक क्रोध काफूर हो जायगा।

"सरदारो, क्यों मेरी प्रतिज्ञा करते हो, शीघ्र भोजन कर लीजिये।

"यह कब संभव है कि आप तो निराहार रहें और हम अपने पापी पेटके खड्डे को भरें। हम नगर में जाते हैं और शीघ्र ही मन्दिर की तलाश कर आपके पास आते हैं"।

"मैं अपने लिये आपको कष्ट पहुंचाना उचित नहीं समझता। मैं स्वयं नगर में चला जाता हूँ"।

"आप हमारे पूजनीय पुरुष हैं। यहीं विराजिये। हम अभी लौटकर आते हैं"।

"खैर, जैसी आपकी इच्छा"।

इतना सुनकर सरदारों का नायक नगर में गया और यह पता लगा आया कि एक यतिजी के उपाश्रय में भगवान् की मूर्त्ति स्थित है। पीछा तालाब पर आकर उसने यह समाचार भंडारीजी को सुनाया।

भंडारीजी यह शुभ समाचार सुन प्रफुल्ल चित्त हो सरदारों के नायक को साथ ले तुरन्त नगर में पधारे। उपाश्रय में पहुँच यतिजी को नमस्कार कर परम पुनीत शान्त मुद्रावाली मनोहर भगवत् प्रतिमा के दर्शन कर द्रव्य और भाव से पूजा की। बाद में गुरुवर्य को विधिपूर्वक वंदना कर रवाना होने लगे।

यतिजीने धर्मलाभ देकर पूछा—"भंडारीजी आप इस समय कहाँ से पधार रहे हैं"

भंडारीजी—"महाराज मैं जेतारण से आया हूँ किसी कार्यवश जोधपुर जा रहा हूँ।"

यतिजी—"भंडारीजी आपके मुख पर उदासीनता क्यों दिखाई दे रही है। क्या मेरा अनुमान ठीक है ?"

भंडारीजी—"गुरु महाराज-आप लोगों को धन्य है कि आप असार–दुखों के आगार-संसार का त्याग कर आत्मकल्याण के कार्य में स्वतंत्रतया निरत हैं। मुझ से पामर प्राणी संसार के दुःख रूपी कोल्हू में रातदिन पिल रहे हैं तो भी सचेत नहीं होता। सदैव कोई न कोई आपदा लगी ही रहती है। वह शुभ दिन कब उदय होगा जिस दिन मैं इन मिथ्या भ्रमों से उन्मुक्त होकर मोक्षपथका पथिक बनूँगा।

यतिजी—"भंडारीजी! आपका कथन अक्षरशः सत्य एवं तथ्य है। संसार का तो यही गोरखधंधा है। क्लेश और

चिंता से संसार का वातावरण नित्य ओतप्रोत है। संयम लेकर भगवान् की आज्ञानुसार कर्त्तव्य पथपर चलना—इसके बराबर कोई सुख है ही नहीं। परन्तु यदि कोई आत्म संयम पालन में असमर्थ हो और गृहस्थावस्था में ही न्याय और नीतिपूर्वक कार्य करता हुआ जीवन बितावे तो वह भव्य पुरुष अपने सतत् उद्योग में कर्म-कलुष को ज़रज़र करता हुआ भवान्तर में मोक्षपद का अधिकारी हो सकता है—इसमें कोई संदेह नहीं है। भंडारीजी सुख और दुःख ये पौद्गलिक वस्तुएँ हैं। जो जैसा कर्म करता है उसे वैसा ही फल अवश्य-मेव भुगतना पड़ता है।"

भंडारीजी—"गुरुजी! मैंने समझ बूझकर किसी प्राणी पर कोई अत्याचार नहीं किया है। न जाने किस भव के कर्मों का उदय हुआ है जिसके कारण कि आज मैं निरपराधी होते हुए भी बन्दी की नांई जोधपुर लेजाया जा रहा हूँ। अपराधी का दंडित होना तो न्याय संगत है परन्तु धर्मद्वेषियों की करतूत के कारण मुझ निर्दोषी पर क्या जुल्म गुज़र रहा है इसी बात की मुझे चिन्ता है।"

यतिजीने अपने स्वरोदय के हिसाब से कहा—"भंडारी-जी घबराने की कोई बात नहीं है। यह निश्चयपूर्वक धारणा रखिये कि सत्य की अन्त में अवश्य विजय होगी। मेरा यह आंतरिक साधुवाद है।"

भंडारीजीने गुरुवचन श्रवण कर कहा 'तथास्तु'। तब गुरुमुख से मांगलिक संदेश सुन तालाब पर आकर सब के साथ भोजन कर रवाने हो निश्चित समय पर ये जोधपुर पहुंच गये।

तात्कालीन मारवाड़ाधिपति महाराजा श्री गजसिंहजी थे जिनकी न्यायप्रियता इतिहास प्रसिद्ध है। उन्होंने भंडारीजी के विषय में खानगी पूछताछ की तब भंडारीजी को निर्दोष पाया। उधर भंडारीजी भरे दरबार में प्रविष्ट हुए। इन्होंने मुजरा किया तब दरबारने इनकी प्रशंसा करते हुए ५००) रजत मुद्राओं का पुरस्कार प्रदान किया तथा वेतन में भी वृद्धि की। साथ ही में इनका कुछ कुरब भी बढ़ा दिया। यह घटना देखकर दुश्मनों के अरमान मन ही मन रह गये। वे ऐसे झेंपे कि काटो तो खून नहीं। अब वे मन ही मन पूरा पश्चाताप करने लगे और साथ में यह भी भय उत्पन्न हुआ कि दरबार हमारे को न मालूम क्या दंड देंगे।

भंडारीजी पुरस्कार प्राप्त कर मन ही मन प्रभुपूजा की प्रशंसा करने लगे। दरबार साहबने आज्ञा दी कि जो दूत इन्हें लेनेको गये थे वेही पहुंचावें। भंडारीजी सम्मान उपार्जन कर वापस लौटे। साथ में आनेवाले दूत सोचने लगे कि सत्यता और प्रभुदर्शन का प्रत्यक्ष परिणाम हमने आज देख लिया। भंडारीजी जोधपुर से चलकर सीधे कापरड़े पहुंचे वहां पहुंच प्रथम उन्होंने प्रभु के दर्शन किये तत्पश्चात् गुरुराज को

नमस्कार कर अपनी राम कहानी कह सुनाई । भंडारीजीने इसका सारा श्रेय गुरु व देवकी कृपा को ही दिया और एतदर्थ कृतज्ञता भी ज्ञापन करने लगे । भंडारीजी गद् गद् वाणी हो कहने लगे—" गुरुवर्य ! आपकी दया ही से मेरे सकल मनोरथ सिद्ध हुए हैं । यह जो कुछ हुआ है वह आपके शुभ आशीर्वाद का ही फल है । इससे जैन शासन की प्रशंसा और शत्रुओं के दांत खट्टे हुए हैं । "

यतिजीने भंडारीजी के कथन को स्वीकार करते हुए कहा—" भंडारीजी जैन धर्म कल्पवृक्ष है अथवा कहिये कामधेनु है । वह चिंतामणी की तरह इस लोक और परलोक में सुख और शांति का दाता है । परन्तु चाहिये इस पर अटूट श्रद्धा-दृढ़ प्रेम और सम्यक् समकित । इस बात को भी लक्ष्य में रखना परम आवश्यक है कि यदि शुभ अर्थात् धार्मिक कार्य करते हुए अशुभ कर्मोदय हों तो परम हर्ष मनाना चाहिये क्योंकि इससे लिया हुआ ऋण कर्मों को चुकाया जाता है । इस समय सम्यक् दृष्टि के अस्तित्व जितने पूर्व संचित कर्मों का क्षय हो जाय उतना ही अच्छा है क्योंकि इससे आत्मा के मैल दूर हो रहे हैं । ऐसी विपत्तियों को धैर्यता से सहन करना ही श्रेयस्कर है । इस सहनशीलता की सर्व सामग्री आपके पास तैयार है । अनुकूल सामग्री से ही कर्मों का ऋण शीघ्र और सहज ही चुकाया जा सकता है । भंडारीजी ! आप सचमुच बड़े भाग्यशाली, प्रतिज्ञा पालक और दृढ़ नेमी हैं । आपका

सौजन्य श्लाघनीय है। यदि आपके मनोरथ सिद्ध हों तो इसमें क्या आश्चर्य है। आशा है आप इसी प्रकार धर्म कार्यों का आराधन करते रहेंगे।"

भंडारीजीने तथास्तु कह कर पूछा—"महाराज, मेरे योग्य कोई सेवा-कार्य हो तो आज्ञा दीजिये।"

यतिजीने इस अवसरको देखते हुए कहा-"भंडारीजी! मेरे चित्त में एक अभिलाषा कई दिनों से थी। आज प्रसंग आ गया है कह देना ठीक समझता हूँ। यद्यपि यह कापरड़ा नगर इतना बड़ा है तथापि यहाँ एक भी जिनालय का न होना कितना सोचनीय कार्य है। सुना जाता है कि यहां पहले जैन मन्दिर तो कई थे परन्तु अत्याचारी यवनों द्वारा सब नेश्त नाबूद कर दिये गये। यदि आपकी इच्छा हो तो इस पुण्योपार्जन का आप लाभ ले सकते हैं।"

गुरुभक्त भंडारीजीने अपने आपको बड़ा अहोभागी समझा कि मुझे कैसा उत्तम पथ प्रदर्शन कराया गया है। वे प्रसन्न चित हो कहने लगे-"गुरुजी, यह तो एक साध्य कार्य है, परन्तु यदि आप असाध्य कार्य के लिये भी आज्ञा प्रदान करते तो मैं उसको साध्य बनाने में देवगुरु की असीम कृपा से समर्थ होता। लीजिये मेरे पास ५००) तो यह पुरस्कार के आए हुए इस समय तैयार हैं। बताइये और कितने चाहियें?" यह कहते हुए भंडारीजीने ५००) की थेली यतिजी के सम्मुख रखदी।

यतिजीने कहा कि इतने रुपये तो इस कार्य के लिये अभी पर्याप्त है। यतिजीने उस शुभ वेला में थैली के उपर वर्द्धमान-विद्या से सिद्ध किया हुआ ऋद्धि-सिद्धि-वृद्धि-संयुक्त वासक्षेप डाला। यतिजीने कहा इतना ध्यान रखना कि इस थैलीको मत उलटना। भंडारीजीने गुरुवचन शिरोधार्य कर उस ग्राम में गये। एक मकान लेकर कुछ समय तक भंडारीजी उसी ग्राम में रहे और मन्दिर बनवाने के लिये यतिजी से समय समय पर परामर्श लेते रहे। सुघड़ सोमपुरों को बुलाकर शुभ मूहूर्त में मन्दिर की नींव डाली गई। इसके बाद भंडारीजीने अन्य सोमपुरों को बुलाकर उनसे कहा कि यहां ऐसा विशाल और अद्भुत मन्दिर बनाओ कि जैसा आसपास में कहीं न हो। सोमपुराने कहा कि अच्छा हो यदि हम कुछ दिनों के लिये देशाटन कर आवें ताकि हम दूसरे कई मन्दिरों को देख आवें। भंडारीजीने आज्ञा देदी। कापरड़े में उस समय जोराजी[१] अच्छे शिल्पज्ञ सोमपुरे थे जिनको देवी का इष्ट भी था। ये ६ मास तक घूम घूम कर अनेक मंदिरों की बनावट का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करते रहे और जहां कुछ कारीगरी देखी नोट भी करते रहे ताकि नकशा तैयार करने

---

१ जोराजी सोमपुरा के वंशजों में इस समय चाणोद के कस्तूरजी आदि सोमपुरे हैं जो इस समय कापरड़ाजी के जीर्णोद्धार में काम करते हैं।

में आसानी रहे । अन्त में देखते दिखाते राणकपुर आए तो इनका हृदय प्रफुल्लित हुआ । राणकपुर का भीमकाय विशाल प्रासाद आचार्य सोमसुन्दर सूरि के अध्यक्षता में गोडवाड़ के चतुर सोमपुरोंने पांचवे देवलोक स्थित नलिनीगुल्म नामक विमान के आकार के आधार से बनाया । मन्दिर की बनावट देखकर जोराजी के मुख से सहसा यह शब्द निकले–" धन्य है ! धन्ना पोरवाल को कोटिशः धन्यवाद है । मन्दिर बनानेवाले कला कौशलज्ञ सोमपुरे को भी धन्य है । मन्दिर स्वर्गतुल्य है । " उन्होंने सोचा यदि मेरे हाथ से भी ऐसी ही दिव्य रचना बन जाय जो मेरा मानव जीवन सफल हो । ध्यान-पूर्वक वहां का नकशा लेकर वे सीधे कापरड़े चले आए क्यों कि अब और नमूना देखना व्यर्थ था ।

जोराजीने सारा वृतान्त भंडारीजी को कह सुनाया । तब भंडारीजीने कहा यदि वैसा ही मन्दिर बना दें तो आपकी और मेरी विशेषता ही क्या ? सोमपुरेने उत्तर दिया कि अधिकता होना तो ज्ञानी जाने परन्तु मेरा तो ऐसा विचार है कि मैं उस मंदिर से भी एक मंजील ज़्यादा बना दूं अर्थात् जहां राणकपुरजी के मन्दिर में तीन मजले है तो कापरड़े में चार होने चाहिये । परन्तु ....सोमपुरा पूरी बात भी मुख से न निकाल पाया कि भंडारीजीने उसको आज्ञा देदी कि ज़्यादा मैं कुछ नहीं कहता मंदिर अपूर्व होना चाहिये । तदनुसार सं. १६७५ में यह शुभ कार्य प्रारम्भ हुआ ।

शिल्पकार वास्तु–विद्या–विशारद थे। उन्होंने शिल्प-शास्त्र के आधार से व इष्टबल के प्रयोग से कार्य मैत्रीपूर्ण भावना से शुरू किया। मन्दिरजी का मुख्य दरवाज़ा उत्तर को बनाया गया। इसकी बनावट में यह चतुराई दिखाई गई कि मन्दिरके सम्मुख भूमिपर खड़ा हुआ व्यक्ति और वहीं हाथीपर सवार हुआ पुरुष भी दर्शन कर सके। गुरूकी कृपासे द्रव्यकी तो कमी थी नहीं फिर क्या चाहिये। अक्षय थैली का चमत्कार भी प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा था। यह चमत्कार कोई नई बात न था ऐसा तो पहले भी कईवार हो चुका है कि जैनाचार्यों की कृपादृष्टिसे कई भक्तों के मनोरथ सफल हुए हैं। असंगत नहीं होगा यदि यहाँ पर गुरूकी महती कृपा की पुष्टी में कुछ उदाहरण प्रमाण के लिये दिये जाँय—

(१) पार्श्वदत्त श्रेष्टि को गुरू–कृपासे पारस पाषाण की प्राप्ति हुई थी। जिसके कारण उसने चित्रकोट का दृढ़ दुर्ग बंधाया और अपने इष्ट की उपासना के निमित्त क़िले में कई दर्शनीय मन्दिर भी बनवाए।

(२) डीडवानेके भैंसाशाह चोरड़िया पर गुरुकी ऐसी कृपा हुई की जहाँ कंडों (छाणों) का ढेर लगा हुआ थ वहाँ सोने का ढेर हो गया। उस सोने का गदियाणा सिक्का बनवाकर प्रचार किया जिस कारणसे उसके वंशज अबतक ' गदहीया ' नामसे प्रसिद्ध हैं।

(१५) आचार्य सिद्धसूरिने पंजाब में पांच पीरों को साधकर यवनोंको अपूर्व चमत्कार दिखाया। आज पर्यन्त वह सिद्ध पीर के नामसे पूजे जाते हैं।

(१६) आचार्य विजयहीरसूरिने बादशाह अकबर को जो प्रतिबोध दिया जिसने एक वर्षमें छ मास जीवदया पालना या तीर्थों के लिये फरमान और आगरा का ज्ञानभण्डार आचार्य को अर्पण किया वह सब को ज्ञात है इत्यादि।

इस प्रकार के और कई उदाहरण बताए जा सकते हैं इतनाही नहीं बलके जिनके लिये एक स्वतंत्र ग्रंथ भी लिखा जासकता है। पर यहां तो इतना बता देना ही काफी होगा। भाग्यशाली भानुमलजी पर भी इसी प्रकार गुरु कृपा हुई थी। द्रव्य की बाहुल्यता के कारण मन्दिर की बनावट बहुत उत्तम रखी गई। मंदिर का उठाव और मंडाण तो राणकपुरजी के मन्दिर सदृश ही उठाया गया परन्तु इस मन्दिर में यह विशेषता थी कि जहां राणपुरजी का मन्दिर एकान्त में एक पहाड की घाटी में है परन्तु यह मन्दिर एक बडे हमवार मैदान में है यही कारण है कि यह मन्दिर उससे भी विशेष आकर्षक है। यह भीमकाय ऊँचा गगनचुम्बी मन्दिर बहुत दूर ही से यात्रियों और पथिकों का चित्त अपनी ओर सहज ही में खींच सकता है। यद्यपि कार्य बहुत उतावल से किया जा रहा था तो भी तीन वर्ष के अथाग परिश्रम से सिर्फ मन्दिरजी का मूल गम्भारा तथा चारों खण्डके बारह गोख, ऊपर के शिखर के तीन खण्ड एवं सात खण्ड

मूल गुबारे के चारों ओर, चार विशाल रङ्गमण्डप रास पुतलियों युक्त तैयार हो पाए। आगे चारों ओर देहरियों का नकशा हो रहा था। मन्दिर के मुख्य द्वार पर चार पांच देहरियों भी तैयार हो गई थी। रंग मण्डप के आगे खेला मण्डप के बडे २ स्थम्भ के भी पाये लग गये थे। कार्यकर्त्ताओं कर्मचारियों और शिल्पकार एवं श्रमजीवियों का उत्साह भी निरन्तर वृद्धिगत हो रहा था।

परन्तु होनहार बलवान है। 'बंदा चिंते बहु तेरी पर होनहार सो होय'—ठीक ऐसा ही हुआ। मनुष्य कुच्छ और कल्पना करता है और प्रकृति देवी कुछ और ही विधान रचता है। घटना यह हुई कि एक दिन भंडारीजी किसी कार्यवशात् जोधपुर पधारते थे तब आपने अपने सुपुत्र नरसिंह को बुलाकर कहा कि यदि मुझे कदाचित अधिक समय लग-जाय तो पिछला सारा प्रबन्ध करते रहना। यह कुञ्जियों का गुच्छा संभालो परन्तु एक बात मत भूलना। कभी भी इस थैली को उल्टी करके रुपये मत निकालना। ज्यों ज्यों आव-श्यक्ता हो इस थैली में से निकालकर श्रमजीवियों को वेतन चुकाते जाना। भंडारीजी का पुत्र नरसिंह स्वयं चतुर था उसके लिये इतनी संकेत मात्र पर्याप्त था। तथापि भंडारीजी को शांति प्राप्त न हुई। नरसिंह के भरोसे सारा कार्य छोड़-कर आप जोधपुर आ तो गये परन्तु मनमें सदैव यही खटका बना रहा कि न जाने नरसिंह कुतुहल वश ही थैलीको उल्टी कर बैठे या और कुछ घटना हो जाय। किसीने ठीक कहा है

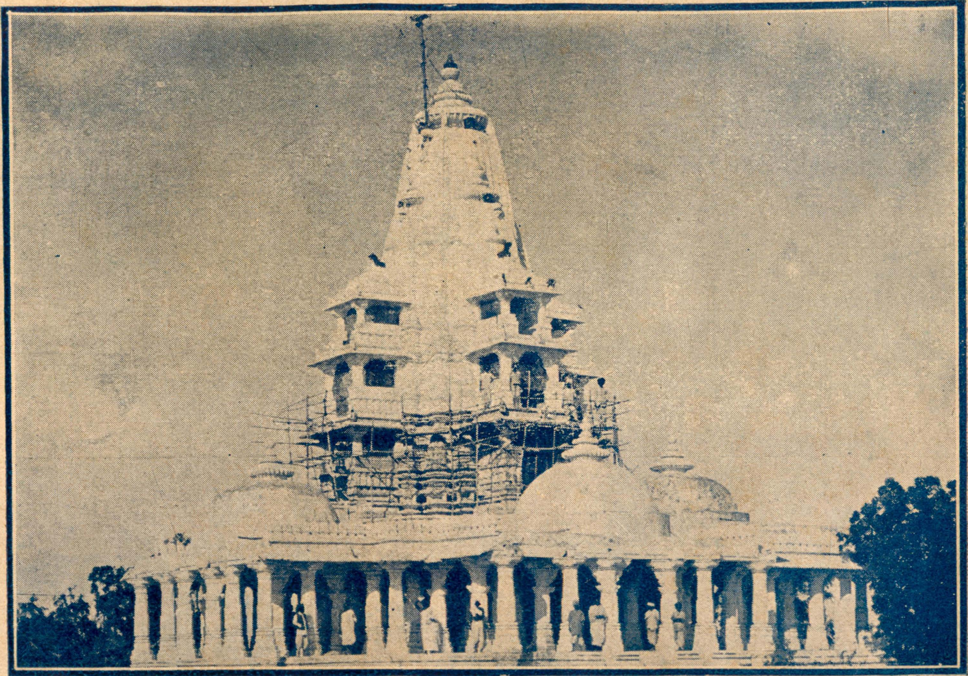

प्राचीन जैन तीर्थ श्री कापरडाजी मारवाड का चौमजला स्वर्ग सदृश मनोहर मन्दिरका जीर्णोद्धार के लिये अडाणबन्धा हुआका भव्य दृश्य।

Lakshmi Art, Bombay, 8.

होनहार हृदयबसे—बिसर जाय सब शुद्ध।
जैसी हो भवितव्यता—वैसी उपजे बुद्ध।

इधर नरसिंह के पास भी दो काम थे—घरका सबकार्य और मन्दिरजीका प्रबन्ध। बहुत दिन तक तो उसने तेजीसे कार्य निबाहा पर अन्त में कार्य में कुछ शिथिलता प्रकट हुई। श्रम जीवियोंको समय पर वेतन नहीं चुकाया जा सका। तकाजे पर तकाजे होने लगे। एक दिन मिस्त्रीने आकर नरसिंह से बड़ी रकम मांगी। आतुरता में नरसिंहने कोषगृहके कपाट खोलकर कार्य को शीघ्र समाप्त करने की व्यग्रतामें देवस्वरुपी थैली को उल्टा कर दिया। रुपये सब बहार आकार ढेर हो गये।

तुरन्त ही नरसिंह को पितृ आज्ञा की स्मृति हुई। उसके चित्त में प्रबल अनुताप उत्पन्न हुआ। उसके रोम रोम में पश्चातापकी ज्वाला धधकने लगी। वह अपने आपको धिक्कारने लगा कि हाय मैंने क्या गजब किया। हाय मेरा कल्पवृक्ष आज सूख गया। मुझ अभागे को चिंतामणि रखने की कहाँ सामर्थ्य। अरे, मेरी चित्रावली कहाँ लुप्त हो गई। मेरी कामधेनु कहाँ चली गई। मेरी मति क्यों मारी गई। अब मैं पिताजी को क्या मुँह दिखाउँगा। गुरु महाराज मुझे क्या समझेंगे। जनता मुझे क्या कहेगी। हाय, मैं कैसा पापी और पामर प्राणी हूँ! मेरे कौन से अन्तराय कर्मों का उदय हुआ है। उफ! मेरे कारण ही जिन मन्दिरका कार्य अधूरा रहेगा,

मेरा तो यह लोक और परलोक दोनों बिगडे। ओफ। मैं कहींका भी न रहा मुझे क्यों खोटी बुद्धि सूझी। इत्यादि प्रकार से उसने बहुत समय तक विलाप किया परन्तु अब पछताये क्या होने को था!

अन्त में उसने निश्चय किया कि मैं यह थैली लेकर क्यों नही गुरु महाराज के पास जाकर और वासक्षेप डलवा दूँ। शायद पुनः इसमें गुरु और धर्म की कृपा से अपूर्व गुण प्राप्त हो जाय! चलते हुए मन में बहुत डरा पर इसके सिवाय और कोई उपाय ही नहीं था। चलकर गुरुवर्य के पास आया और अपनी भद्दी भूलकी सारी बात क्रंदन स्वरसे कह सुनाई। एकबार तो गुरुवर्य के शरीर में क्रोध प्रस्फुटित होने लगा। परन्तु विज्ञ गुरुरायने सोचा कि ऐसा करना अब व्यर्थ है। होना सो तो हो गया अब तो बिगड़ी को बनाने में ही श्रेय है। यतिवर्यने सान्तवन देते हुए नरसिंह से कहा कि चिन्ता करने की कोई बात नहीं है। यह घटना तो होनी ही थी तुम तो एक निमित्त मात्र हो। किसी भी कार्य के प्रारम्भमें व्यवहार और अन्त में निश्चय यही वीतराग के स्याद्वाद सिद्धान्त का मार्ग है। परिताप और पश्चाताप से कुछ होने का नहीं हैं।

"यतिजी के ऐसे बचनों से नरसिंह को कुछ धैर्य बंधा। उसने साहसकर निवेदन किया कि जिस प्रकार आपने मेरे

पिताजी पर महती कृपा की है वैसी मुझपर भी करिये और कृपाकर शीघ्र ही मेरी चिन्ताको हरिये। परन्तु यतिजीने समझा कर कहा–नरसिंह इस समय यह कार्य नहीं हो सकेगा, यदि शुभ संजोग होता तो तुम स्वयं ही अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन न कर पाते। इस समय आग्रह करना व्यर्थ है। यतिजी के इस उत्तर को सुन कर नरसिंहजीने चुपचाप लौटना ही उपयुक्त समझा।

जब भंडारीजी जोधपुर से वापस लौट कर आए तो यह वृतान्त सुनकर बहुत दुखित हुए; परंतु करे क्या! सीधे गुरुजी के पास पहुँचे और नरसिंह की तरह इन्होंने भी अभ्यर्थना की; परन्तु यतिजीने वही उत्तर दिया। अतः भंडारीजी को हतोत्साह होकर घर लौटना पडा। भंडारीजीने सोच लिया कि मेरी तुच्छ तकदीर में ऐसे स्थायी और उत्तम कार्य के होने की संयोजना कहाँ! अबतक सिर्फ चार मण्डप तक का कार्य ही सम्पूर्ण हुआ है। शेष कार्य तो किसी भाग्यशाली द्वारा ही सम्पादित होगा। परन्तु आयुष्य का क्या विश्वास! कैसा अच्छा हो यदि मेरे हाथ से इस मन्दिर की प्रतिष्ठा का कार्य भी हो जाय। इस कार्य के लिये परामर्श लेने के लिये भंडारीजी यतिजी के समक्ष पुनः उपस्थित हुए। यतिजीने भी उस प्रस्ताव का समर्थन किया।

श्रीस्वयंभू पार्श्वनाथ की मूर्त्ति।

भंडारीजी प्रतिष्ठा की तैयारी में लग गये। प्रथम प्रश्न मूर्त्ति का ही उपस्थित हुआ। यद्यपि उस ग्राम में पहले कई मन्दिर थे परंतु यवनों द्वारा सब के सब मन्दिर नष्टभ्रष्ट कर दिये गये थे। लोगोंने वैसी आफत की अवस्था में मूर्त्तियों को भूमि के अन्दर छिपा कर सुरक्षित रख लिया था। इस प्रकार उस ग्राम में भूमि के अन्दर तो कई मूर्त्तियों विद्यमान थी पर किसी को यह मालूम नहीं था कि कहाँ पर है। उन्हीं दिनों उस ग्राम में एक घटना हुई जो इस प्रकार है:—एक कुमारी कन्या को रात को स्वप्न आया कि ग्राम के बाहर अमुक केर के झाड़ के पास एक गाय का दूध अपने आप श्रव हो जाता है, उस जमीन के नीचे स्वयंभू पार्श्वनाथ प्रभुकी मूर्त्ति है वह कल बाहर निकलेगी। ऐसा उस कुमारी कन्या को अधिष्टायिकने स्वप्न दिया तदन्तर उसकी आंख खुल गई। उस कन्याने सारा वृतान्त अपने पिता को कह सुनाया। पिताने यह समाचार तुरन्त जाकर भंडारीजी व यतिजी को कहा। भंडारीजी तो यही चाहते थे। तुरन्त संघ को एकत्र कर गाजेवाजे सहित संकेत के स्थान पर पहुँचे। विविध प्रकारों से भगवान् की स्तुतियें कर लोग प्रार्थना करने लगे कि हे प्रभु! संघ

दर्शनों के लिये आतुर है। शीघ्र दर्शन दीजिये। सहसा अधिष्टायक का ऐसा ज़ोरदार परिचय हुआ कि जमीन में से चार मूर्त्तियें प्रकट हुईं, जिनके दर्शन कर संघ अति प्रसन्न हुआ। चारों ओर हर्ष ध्वनि कर्णगोचर होने लगी। विविध प्रकार के द्रव्यों से पूजा कर मूर्त्तिएँ मन्दिर में ले आए।

यद्यपि मूर्त्तिएँ उस समय चार प्रगट हुईथी जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है परन्तु मन्दिर में केवल स्वयंभू पार्श्वप्रभु की एक मूर्ति की ही प्रतिष्टा हुई। इसका कारण कदाचित् यह होगा कि एक मूर्त्ति बड़ी और परिकर संयुक्त थी और शेष मूर्त्तियें छोटी होगी इस पर श्री संघने यह उचित समझा होगा कि चौमुखीजी के मन्दिर में तो चार मूर्त्तियें एक ही प्रकार की स्थापित होनी चाहिये अतः एक तो प्रतिष्टित करावा दे। और शेष के लिये यह निश्चय कर लिया होगा कि इसी प्रकार की तीन मूर्त्तियें बनवाई जावें और बाद में अंजनशलाका करा के प्रतिष्टा करादी जाय। ऐसा होना बहुत कुछ सम्भव मालूम होता है। शेष तीन मूर्त्तियों के लिये ऐसा कहा जाता है कि एक सोजत, दूसरी पीपाड़ और तीसरी जोधपुर के जैन मन्दिरों में स्थापित की गई। ये तीनों मूर्त्तियों आज पर्यंत इन तीनों स्थानों पर विद्यमान हैं। ऐसा मालूम होता है कि ये चारों मूर्त्तियों एक ही वर्ण (नीला) की तथा एक ही समय की बनी हुई हैं। इन चारों मूर्त्तियों का चमत्कार प्रकट है। इस का कारण यह है कि इनके

अधिष्टायक सजग हैं। जो भक्त इन पर दृढ विश्वास और पूर्ण श्रद्धा रखते हैं उनके मनोरथ अवश्य सफल होते हैं।

भंडारीजी तो पहले ही से इस बात की प्रतीचा में थे कि कब मुझे मूर्त्ति उपलब्ध हो और कितना शीघ्र मैं उसे प्रतिष्टित करवा के अपने मानव जीवन को सफल करूं। उनके शुभ भाग्योदय से सर्वांग सुन्दराकार दिव्य मनोहर और अतिशययुक्त मूर्त्ति प्राप्त हो गई जिससे सर्व संघ और भंडारीजी के उत्साह और उमंग में कई गुना अभिवृद्धि हुई। प्रतिष्टा के लिये आवश्यक तैयारियों बडे जोर शोर से की जाने लगी। प्रतिष्टा के शुभ अवसर पर निकट और दूर के बहुत से लोग आमंत्रित कर बुलाये गये। उत्साह और हर्ष लोगों के उरमें इतना अधिक प्रस्फुटित हुआ कि वे एक पल की देर भी दिवस या वर्ष जितनी जानने लगे। सकल संघ की सम्मति और सहायता से वि. सं. १६७८ के वैशाख शुक्ला १५ सोमवार को बडी धूमधाम से प्रतिष्टा का कार्य हुआ। प्रतिष्टा करवानेवाले भाग्यशाली सज्जनों के नाम आप को निम्नलिखित शिलालेख से विदित होंगे। यहाँ यह भी बता-

---

१ इस मन्दिरजी कि प्रतिष्टा विषय का शिलालेख वीलाडा की वही से प्राप्त हुआ हैं। श्री प्रतिमाजी पर के शिलालेख की नकल.

" संवत् १६७८ वर्षे वैशाख सित १५ तिथौ सोमवार स्वातौ महाराजाधिराज महाराज श्रीगजसिंह विजयराज्ये उकेशवंशे

देना आवश्यक है कि यद्यपि प्रतिष्ठाकार की यह हार्दिक इच्छा थी कि यह कार्य शुभलग्न में हो परंतु भवितव्यता भी बलवान होती है। लोगों की बेदरकारी कहिये अथवा भवितव्यता का नाम लीजिये परन्तु प्रतिष्टा निश्चित शुभलग्न में न हो सकी तथापि भंडारीजी तो भाग्यशाली थे जिन्होंने प्रतिष्टा करवाके अपने मानवजीवन को सफल किया। इस भीमकाय विशाल जिनालय का प्रभाव केवल जैनियों पर ही नहीं अपितु राजा महाराजाओं पर भी हुआ जिसके परिणाम स्वरूप जोधपुर दरबार की ओर से इस मन्दिरजी के लिये स्थावर मिल्कत के तौरपर कई बीघा भूमि प्राप्त हुई। इस भूमि की उपज की आय से मन्दिर का खर्च सुविधापूर्वक चलता था। इस भूमि के अतिरिक्त राज्य की ओरसे मासिक ३०) भी इस मन्दिरजी के लिये मिलते थे। यह भूमि और ३०) की मासिक सहायता सर प्रतापसिंहजी से पहले तक

राय लाखण सन्ताने भंडारी गौत्रे अमरापुत्र भानाकेन भार्या भक्तादे पुत्र रत्न नारायण नरसिंह सोडा पौत्र ताराचन्द खंगार नेमिदासादि परिवार सहितेन श्री कर्पटेहट के स्वयंभू पार्श्वनाथ चैत्य श्री पार्श्वनाथ....इत्यादि

"श्री कापरडाजी तीर्थ."

१ इस मन्दिर के पट्टे परवाने व सनद आदि के कागजात आजतक जेतारण के भंडारियों के पास मौजूद हैं।

मिलता था परन्तु जब से नवीन प्रबंध (Settlement) विभाग का कार्य प्रारम्भ हुआ तब कई डोलिये खालसे हो गई। इस समय यह भूमि भी खालसे होगई। उस समय कापरडे मन्दिरजी के प्रबंधकों में कोइ ऐसा नहीं था जिसने इस विषय में पेरवी की हो तथापि मासिक सहायता के ३०) मिलते रहे। परन्तु जब राज्य की और से देवस्थानों की सहायता घटाई जाने लगी तो इस मन्दिर की सहायता भी घटाकर १५) करदी गई। बाद में इसमें और कमी की गई। ७॥) और ५) के पश्चात् यहां तक हुआ कि मासिक सहायता बिल्कुल बंद करदी गई है। अब तक यह सहायता बंद है।

परिकर के शिलालेख से यह भी पाया जाता है कि प्रतिष्टा के बाद भी थोडा बहुत काम अवश्य हुआ है परन्तु यह था बहुत थोडा क्योंकि जो मुख्य काम अधुरा रह गया था वह आज पर्यंत भी ज्यों का त्यों अधूरा पडा हुआ है। जिनालय की प्रतिष्टा के पश्चात् केवल थोडे समय तक ही वह घनी आबादी रही थी। आबादी घटने का कारण यह था कि मन्दिरजी प्रतिष्टा के लग्न के मुहूर्त्त में लोगोंने गडबडी करदी थी। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि भवितव्यता ही ऐसी थी। परन्तु यह तो निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि भंडारीजी के बाद में ऐसा कोइ भी भाग्यशाली पुरुष रत्न उत्पन्न उस नगरी में नहीं हुआ था जिसने कि उस अधूरे रहे कार्य को पूर्ण करा दिया हो। पुरानी ख्यातों और वंशावलियों को

देखने से मालूम हुआ है कि प्रतिष्टा के पश्चात् एक शताब्दी तक उस नगर की जाहोजलाली वैसी ही बनी रही.

विक्रम की अठारहवीं शताब्दी के उतरार्द्ध तक तो मारवाड प्रान्त के जैन समाज में बडा भारी संगठन था इसका मुख्य कारण यह था कि समस्त जैनी मूर्त्तिपूजक थे। सारा जैन समाज जिनमूर्त्ति पूजन में तन मन और धन से रत्त था। प्रतिदिन वे सुकृत का कोई न कोई कार्य कर ही लेते थे तब फिर कमी ही किस बात की थी। कहा भी है 'यतोधर्मस्ततो जय'। इस नीति के अवलंबन से जैन समाज की सदा बढ़ती और सिद्धि होती थी। परन्तु दुर्भाग्य वश जब से जैनों में मूर्त्ति पूजना और नहीं पूजना ये दो विषम भेद हुए उस दिन से ही जैनों के दिन पलटे। इस भेद से ग्राम और शहर में जगह जगह क्लेश, कदाग्रह, राग-द्वेष, फूट-फजीती और मनमानी होने लगी। एक दूसरे को कट्टर दुश्मन समझने लगे जिस से न्याति जाति के संगठन भी शिथिल हो गये। एक दूसरे को हेठा और तुच्छ दिखाने के लिये येन केन प्रकारेण कोशिष करने लगा। ऐसी अवस्था में लक्ष्मी जैनियों के यहां से किनारा कर गई। राज्यतंत्र भी हाथ से निकलने लगा। उधर व्यापार भी पेंदे बैठने लगा। कदाचित् कापरड़ाजी की इस अवस्था का कारण भी यही हो। क्यों कि इस मतभेद के कारण सब से अधिक बुरा परिणाम यदि हुआ है तो वह यह है कि मन्दिरों की आशातना हुई है। जहाँ भगवान् के

नाम से अनेक मन्दिर और मूर्त्तियों स्थापित हुइ थी वहाँ अब लोग उनके प्रति अनादर भाव दर्शाने के साथ साथ अवगुणवाद भी बोलने लगे । जैन मुनियों तीर्थों की और मन्दिरों की आशातना करना एक वज्र पाप है । कहा है—

“ तीरथकी आशातना नवि करिये,
हाँ रे नवि करिये रे नवि करिये;
धूप ध्यान घटा अनुसरिये—
हाँ रे तरिये संसार—तीरथकी०
आशातना करतां थकां धन हाणी ।
हाँ रे भूख्यां न मिले अन्न पाणी;
हाँ रे काया वली रोगे भरांणी—
हाँ रे इण भवमें एम—तीरथकी०
परभव परमाधामीने वश पड़शे,
हाँ रे वेतरणी नदीमें भलसे,
हाँ रे अग्निने कुण्डे बलसे,
हाँ रे नवि शरणो कोय—तीरथकी० ”

(नीनाणवे प्रकारनी पूजा ढाल ११ वीं)

सच जानिये जैन मन्दिरों की, मूर्त्तियों की और तीर्थों की आशातना एक क्षयरोग के समान है । जिस प्रकार क्षय का रोगी यकायक न मरकर धीरे धीरे क्षीण होकर मरता है उसी प्रकार आशातना करनेवाले व्यक्ति, ग्राम, समाज, नगर या राष्ट्र शनैः शनैः हीनावस्था को पहुंचता है । क्यों कि जिन

पदार्थों की भक्ति से मोक्ष जैसी दुर्लभ वस्तु प्राप्त होती है, उनके अनादर करने से जो कुछ अनिष्ट न हो जाय वही थोड़ा है। इस बात को स्वीकार करने में संदेह को कहीं स्थान नहीं हो सकता। ऐसी आशातना से कापरडाजी ही नहीं वरन् समस्त मारवाड़ प्रान्त में जहाँ जहाँ देवद्रव्य और देवस्थान की आशातना हुई है वहां यही हाल हुआ है। जो हमें प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है। वि० सं० १९४४ तक तो कापरड़े में ४० घर महाजनोंके लेखकने अपनी आंखो से देखे हैं परन्तु इस समय तो केवल १ घर ही रहा है। क्या अब भी जैन समाज चश्म-पोशी करेगा ? क्या जैन समाज का यह स्पष्ट कर्तव्य नहीं है कि वह अपने परम पुनीत तीर्थ की आशातना को मिटाकर सेवा, पूजा, भक्ति और उपासना में कमर कस कर कार्य कर अपूर्व सुख का अनुभव कर अपनी वर्त्तमान पतित दशा से निकल कर अभ्युदय की ओर अपना कदम बढ़ावे। दूर जाने की भी ज़रूरत नहीं हैं। अपने पडौसी गोड़वाड प्रान्त की प्रगति की ओर ही दृष्टिपात करियेगा तो आपको मालूम होगा कि वे अपने तन, मन, धन से जिन मन्दिरों और मूर्त्तियों की सेवा, पूजा और उपासना करते हैं। इतना ही नहीं वे तो अपने देवस्थानों के लिये जीवन तक बलिदान करने को कटिबद्ध हैं। यही कारण है कि उनके यहाँ सुख के समुद्र भरे पड़े हैं। हमारा यह कहना व्यक्तिरूपसे नही है परन्तु सामुदायिक अपेक्षा से है। अस्तु.

कापरड़ाजी में जब महाजनों का केवल एक ही घर रहा तो फिर क्या आशा रखी जा सकती है कि मन्दिर की मरम्मत का काम भी हो सके। क्रमशः इस तीर्थ की ऐसी अवस्था हुई कि जिसका वर्णन लिखते हुए लेखिनी का साहस नहीं होता कि कुछ आगे बढ़े। लेखनी ही क्या हाथ भी थर थर कम्पायमान होने लगता है। हृदय दबा जाता है। आंखे शोक बहाना चाहती हैं। वर्तमान अवस्था पर विचार करते हुए खेद और परम खेद होता है कि कहाँ तो वे परम उत्कर्ष दिन थे जब हमारे पूर्वज तीर्थ रक्षण की प्राणप्रण से चेष्टा करते थे। कौन नहीं जानता कि हमारे पूर्वजोंने यवनों के आक्रमणों से जिनालयों को बचाने के लिये अपने प्राणों को हथेली पर धर कर उनसे भूझ पड़े और धर्म के लिये हँसते हँसते प्राण दे दिये और कहाँ हम इस सुविधा के युगमें सर्व समर्थ होते हुए भी अपने आवश्यक कर्त्तव्य से पराङ्मुख हैं कि अपनी आंखो के सामने तीर्थों की आशातना देख रहे हैं। हमें ऐसी उदासीनता और बेदरकारी के लिये क्या उपाधि दी जाय।

हमारी इस असावधानी और लापरवही का लाभ अन्य लोगोंने उठाया। उन्होने जिनालयों के अन्दर अपने माने हुए देवी देवताओं की मूर्त्तियों स्थापित की और मन्दिरों पर अपना आधिकार जमाना सरू किया। विवाह आदि के अवसर इन देवी देवताओं की पूजा की जाने लगी तथा

जैन मन्दिरों में बच्चों के झडुले (बाल काटना) आदि कई अनुचित कार्य होने प्रारम्भ हो गये। नौबत यहां तक बुरी पहुंच गई कि पिचयाक के बंदे से जो मच्छियों की डाक जोधपुर जाती है तब उसके लेजानेवाले भी रास्ते में विश्राम लेते समय इसी मन्दिर में डेरा लगाते थे। इस से अधिक क्या पतित हालत हो सकती है ? ऐसी विकटावस्था में कभी इधर से बीलाड़ा और कभी उधर से पीपाड़ श्रीसंघ इस मन्दिर की ओर द्राष्टिपात करता था इस लिये वे धन्यवाद के पात्र ठहराए जांय तो अनुचित न होगा।

प्रकृति का एक ऐसा नियम है कि कृष्णपक्ष के बाद शुक्लपक्ष जरूर आता ही है। वही हालत इस तीर्थ की हुई क्योंकि इसकी आशातना भी चरम सीमा तक पहुंच चुकी थी। अतः कृष्ण पक्ष के अंत आने पर ज्यों शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा आती है उसी भांति उस समय श्रीमान् पन्यासजी श्री हर्षमुनिजी अपने शिष्य मंडल सहित बीलाड़े के कतिपय श्रावकों के साथ इस तीर्थ की यात्रार्थ पधारे। दर्शन करने के पश्चात् जब आपने ध्यानपूर्वक जिनालय का निरीक्षण किया तो आपके कोमल हृदय पर सहसा इस बात की खूब जोरदार वेदना हुई कि हाय, हमारे तीर्थों की आज यह दशा हो गई है ! जहां जरूरत नहीं हैं वहां तो रंग, रौगन और बेल बूटों व आकर्षक लुभावने पदार्थों के लिये लाखों रूपये लगाये जा रहे

हैं। और ऐसे महत्व के कार्य पर श्रीसंघ का लक्ष्य तक नहीं। यह कितनी सोचनीय बात है। आपने इस प्रयत्न में तीर्थोद्धार प्रेमी सेठ लल्लुभाई को, जिन्होने करेडाजी तीर्थ के जीर्णोद्धार में अत्यधिक रुचिपूर्वक सहायता कीथी, इस तीर्थ की तात्कालिक आवश्यकताएँ लिखी। इस पर भाग्यशाली लल्लुभाई सेठने उमंगपूर्वक आठ दस हजार रूपये इस तीर्थ की सहायतार्थ (जीर्णोद्धार में) लगाये। परन्तु जहां जीर्णोद्धार के सांगोपांग कार्य के लिये लाखों रूपइयों की आवश्यक्ता है वहां इतने द्रव्य से क्या गरज सर सकती है। तथापि सेठजी व पन्यासजीने इस कार्य को प्रारम्भ करके आवश्यक्ता के अवसर पर अच्छी सहायता पहुंचाई जिसके लिये हमें उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों का हृदय से आभार मानना चाहिये.

जीर्णोद्धार का कार्य प्रारम्भ हो गया था परन्तु अधूरा काम होने से पहले का सब किया कराया जीर्णोद्धार का भी सफाया होने लगा। टीपें इत्यादि टूटने लगी और यह जीर्ण मन्दिर गिरने की हालत में हो गया। उस समय कुदरतने एक व्यक्ति के हृदय में जीर्णोद्धार कराने की भावना पुनः उत्पन्न की। यह व्यक्ति थी जैन शासन के उज्जवल सतारे तीर्थोद्धारक प्रबल प्रतापी जैनाचार्य श्री विजयनेमिसूरीश्वरजी महाराज। आपकी शुभ द्रष्टि इस तीर्थ की ओर हुई जब आपने स्वयं पधार कर इस मन्दिर को देखा तो आपके रोमांच खडे हो गये। सहसा आपके अन्तःकरण से यह ध्वनि प्रस्फू-

टित हुई । हाय, हमारे तीर्थों की आज यह दशा ! आपने मन ही मन दृढ संकल्प किया कि बिना इस तीर्थ का जीर्णोद्धार कराये में गुजरात में प्रवेश नहीं करुंगा । दृढ प्रतिज्ञ आचार्य-श्रीजी अपने वचन पर तुले रहे । यों तो आपने और भी कई तीर्थो का जीर्णोद्धार करवाया था परन्तु वहां तो सब साधन आपको अनुकूल थे । द्रव्य सहायकों की भी पुष्कलता थी । जिससे उन तीर्थों का जीर्णोद्धार सानन्द समाप्त हुआ था; परन्तु यहाँ का वातावरण तो कुछ और ही था । जीर्णोद्धार के साधनों को यहाँ जुटाना जरा टेढी खीर थी । कार्यकर्त्ताओं की शिथिलता, द्रव्य का अभाव, जैनियों की बस्ती का उस ग्राममें कम होना आदि कई बाधाएँ उपस्थित थी । दशा यहाँ तक सोचनीय थी कि आपके ठहरने के लिये भी कोई स्थान नहीं था । यहाँ तक कि आपको कई बार तम्बू और साईवान में ही रहने को स्थान मिला । यह मन्दिर जैनेतर जनता के हस्तगत होनेवाला था । आचार्यश्री की पक्की लगन को देखकर उनके जी में यह विश्वास हो गया कि अब तो यहाँ का जीर्णोद्धार अवश्य हो के रहेगा । कापरड़ा जी की आसपास की जैनेतर जनताने इनके विपक्षमें आंदोलन करने के लिये अपना ज़ोरदार संगठन किया । सिवाय आचार्यश्री की शक्ति के और किस की सामर्थ्य थी कि उनके समक्ष ठहर सके । विपक्षियोंने अधिक विघ्न उपस्थित किये । वादानुवाद इतना बढ़ गया कि अन्त में इसका एक मुकदमा चला ।

जिसकी कार्यवाही जोधपुर की अदालत में होनी प्रारम्भ हुई। जोधपुर के जैन वकीलोंने उस समय जी जानसे सहायता दी। उपद्रवियों का इतना होंसला बढ़ गया कि यहां कुछ दिनों के लिये तथा शांति रक्षा के लिये यहाँ पुलिस भी रखनी पड़ी।

अन्त में आचार्यश्री के तप तेज के प्रताप से सत्य ही की विजय हुई। न्यायाधीशने प्रकट किया कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह जैनियों का ही मन्दिर है। दूसरे किसीको भी इसमें हस्तक्षेप करने का किसी भी प्रकार का अधिकार नहीं है। फिर क्या देरथी। सब देवी देवताओं को मन्दिर के बाहर यथास्थान रख दिये। मन्दिरजी का खास खास जरुरी जीर्णोद्धार भी करवाना प्रारम्भ किया गया। शास्त्रकारों का स्पष्ट कथन है कि नये मन्दिर बनवाने की अपेक्षा पुराने मन्दिर का जीर्णोद्धार कराने में आठगुना अधिक पुन्य है।

वि० सं० १६७५ का माघ शुक्ला ५ को (वसंत पंचमी) शुभ मुहूर्त और शुभ लग्न में आचार्यश्री के वासक्षेप पूर्वक मूलनायक श्री स्वयंभू पार्श्वनाथ भगवान्की मूर्त्ति(नील वर्ण) जो पहले से ही विराजमानथी और १७ बिम्ब आचार्यश्री की अनुग्रह कृपा से खंभात या अहमदाबाद और पाली से मंगवाए गये थे, इस प्रकार अष्टादश मूर्तियों (चार मंजिला में १६ तथा मूल गभारे की. दो ताको में २) की बड़ी समारोह से प्रतिष्टा करवाई गई। प्रतिष्टा के महोत्सव का वर्णन अकथनीय है। चारों ओर चहल पहलथी। लोगों के आगमन से जंगलमें

मंगल बरत रहे थे। आठ दिन तक हर्षोत्साह पूर्वक अट्ठाई महोत्सव मनाया गया। जिसके अपूर्व ठाठ की शोभा देखने से ही बन आती थी। लोगों के चित्त में परम हर्ष का उल्लास प्रकट हो रहा था। वीसलपुरादि भिन्न भिन्न ग्रामों के भावीकों की और से स्वामिवात्सल्य और पूजा–प्रभावना होती थी। प्रतिष्ठा का असीम प्रभाव पड़ रहा था। जो लोग पहले इस जिनालय के विपक्ष में थे वे भी प्रतिष्ठा के अतिशय से इसके भक्त हो गये। क्यों न हो, धर्मका प्रभाव ही ऐसा होता है। इस मन्दिर के जीर्णोद्धार में अब तक लगभग एक लक्ष रुपये खर्च हो चुके हैं। यदि अवशेष काम की पूर्त्ति अब कराई जाय तो यह काम लगभग २०–२५ लक्ष रुपये खर्च करने से होगा। परन्तु इस समय की आर्थिक स्थिति को देखकर केवल अत्यावश्यक जीर्णोद्धार का कार्य ही करवाया जाता है। अतः जैन समाज धनी, मानी और उदार हृदय दानवीर नररत्नों को चाहिये कि ऐसे प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों के जीर्णोद्धार में सहायता पहुंचा कर अनंत पुन्य को अवश्यमेव उपार्जन करें।

इस पवित्र तीर्थ के जीर्णोद्धार व प्रतिष्टा के कार्य में जिन जिन महानुभावोंने रुचिपूर्वक लाभ उठाया है उनकी सुवर्ण नामावली यहाँ पर आदर पूर्वक लिख कर हम इस लेख को समाप्त करते हैं। आशा है अन्य धर्मप्रेमी जन भी अपने हृदय में एसी ही भावना उत्पन्न करेंगे।

(१) इस पवित्र तीर्थ के जीर्णोद्धार व पुनः प्रतिष्ठा के कार्य के नायक तो तीर्थोद्धारक जैनाचार्य श्री श्री १००८ श्री विजयनेमिसूरीश्वरजी हैं। आपश्रीने अनेक कठिनाईयों का सामना करते हुए इस कार्य के लिये बद्धपरिकर हो पूर्ण रूपसे प्रेरणा और प्रयत्न कर आशातीत सफलता प्राप्त की। तीर्थ के आधुनिक अभ्युदय का प्रथम श्रेय आपश्रीको ही है।

(२) इस पवित्र कार्य में आचार्यश्री के सदुपदेश से द्रव्य की विशेष सहायता देकर प्रतिष्ठा करानेवाले संघपति श्रीमान् अमीचंदजी गुलाबचन्दजी पालड़ी निवासी है जिनकी आर्थिक सहायता से जीर्णोद्धार का कार्य भी हुआ।

(३) जीर्णोद्धार में श्रीमान् सेठ माणेकलाल मनसुखभाई अहमदाबाद निवासी की ओर से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई जिस से बड़े चबूतरे का जीर्णोद्धर कार्य कराया गया। आप की ओर से एक बंगला और एक धर्मशाला भी यहाँ बनी हैं। वसंत-पंचमी का मेला का तमाम खर्चा भी आपकी ओर से होता है।

(४) इस आवश्यक कार्य की प्रेरणा और तन मन धन से सहायता करनेवाले सेठ पन्नालालजी सराफ बीलाड़ा निवासी का कार्य भी प्रशंसनीय रहा।

(५) इस कार्य में विघ्नकाल में सहायता पहुँचानेवाले वकील माणेकराजजी व भंडारी अमोलकचंदजी आदि बीलाड़ा के श्रावक वर्ग का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है।

(६) इस महान् कार्य के अदालती कार्यों में दिलोजान से मदद करनेवाले जोधपुर के जैन वकील श्रीमान् जालमचंदजी साहब आदि वकील मंडली का आभार भूला नहीं जा सकता।

(७) इस प्राचीन तीर्थ के उद्धार व प्रतिष्टा के समय सामग्री आदि की सहायता देकर पीपाड़ आदि आसपास के गांवोंकी जनता ने सेवा की वह भी चिरस्मरणीय रहेगी।

(८) इस संकीर्णता के समय में भी पाली श्री संघकी उदारवृत्ति विशेषतया श्लाघनीय है। जिन्होंने पालीका श्रीनौलखा पार्श्वनाथजी के मन्दिर से श्रीशांतिनाथ भगवान् की मनोहर मूर्ति इस तीर्थ के अर्थ दी जो अब मूलनायकजी के बाँई ओर विराजमान है। सूर्य उदय होते ही प्रथम बार इसी मूर्त्ति का दर्शन करता है।

(९) पाली निवासी संघपति किशनलालजी सम्पतलालजीने पालीसे संघ निकाल सूरिजी की अध्यक्षता में यहाँ के दर्शन कर अपने मानव जीवन को सफल किया। तेदर्थ आप हमारे विशेष धन्यवाद के पात्र है।

(१०) हम बड़े कृतघ्न होंगे यदि खंभात और अहमदावाद के उन महापुरुषों का हृदयसे आभार न मानें जिन्होंने सूरीश्वर के सदोपदेश से जिन प्रतिमाएँ देकर हमें चिर ऋणी बनाया।

(११) आचार्य श्री विजयवल्लभ सूरिजीने अपने शिष्य मंडल सहित इस तीर्थ की यात्रा कर इस बात को जानके परम प्रसन्न हुए कि आचार्यश्री विजयनेमिसूरिजी महाराज के सुप्रयत्न से इस तीर्थ का उद्धार हुआ। आपने तदर्थ सूरिजी की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। परन्तु इस विशाल तीर्थ पर धर्मशाला की त्रुटि आपको खटकने लगी। आपने इस लिये जोरदार उपदेश दिया जिस के फल स्वरूप यहाँ छोटी परन्तु रम्य धर्मशाला बन चुकी है। जहाँ यात्रियाँ को बहुत साता पहुँचती है। जिन सज्जनोंने इस धर्मशाला में कमरे बनवा दिये उनके लिये भी हमारे दिल में संमान और स्थान है।

(१२) इस उद्धार के कार्य में उपर्युक्त महानुभावों के अतिरिक्त अन्य महाशयोंने भी सहायता पहुँचाई है। उनके प्रति भी हम आभारी हैं। वास्तव में वे बड़े भाग्यशाली नर हैं।

यह जानकर आपको अवश्य प्रसन्नता होगी कि अब इस तीर्थ की व्यवस्था का कार्य बहुत सुचारुरूप से हो रहा है। जिसके प्रबंध के लिये एक कार्यकारिणी समिति नियुक्त है। देखरेख में विशेष अभिरुचि श्रीमान् सेठ पन्नालालजी साहब बीलाड़ा निवासी रखते हैं। पीपाड़ के अन्य सभासद भी इस कार्य में तनदेही से कार्य करते हैं।

पेढी का नाम आनंदजी कल्याणजी है। तात्कालिक

(immediate) देखरेख के लिये एक मुनीम भी नियुक्त है। यात्रुओं को ठहरने की जगह, बरतन, विस्तर आदि आवश्यक सामग्री देने की पूर्ण व्यवस्था है। कारखाने में कई कर्मचारी हैं पानी लेने के लिये बैलों की जोडी भी है। कारखाने की संरत्तता में भेट आई हुई कई गायों भी हैं और उनका अच्छा प्रबंध है। कई घोड़ियों भी भेट आई हैं। जीर्णोद्धार का कार्य भी थोडा थोडा जारी है। साथ में एक छोटी सी वाटिका भी है जिस में के पुष्प प्रभु की पूजा में काम आते हैं।

माघ शुक्ला ५ का यहाँ मेला भरता है। इस अवसर पर सेठ माणकलाल मनसुखभाई की ओर से अट्ठाई महोत्सव पूजा, प्रभावना, वरघोडा और स्वामिवात्सल्य आदि हुआ करते हैं।

पहले यात्रियों को पीपाड़ या सेलारी स्टेशन से खुशकी आना पड़ता था परन्तु अब जोधपुर से सीधी यहाँ मोटर नित्य प्रति आती है। दूर के यात्रियों को इस से अवश्य लाभ उठाना चाहिये जिन महानुभावों को इस तीर्थ की यात्रा करनेका सुवर्ण अवसर अब तक नहीं मिला है उन्हें में अनुरोध करता हूँ कि वे किसी तरह समय निकाल कर इस प्राचीन ऐतिहासिक तीर्थ की यात्रा सपरिवार अवश्यमेव करें। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आप इस तीर्थ को भेंट कर अवश्य प्रसन्न होंगे किमाधिकम्।

इस तीर्थ के उद्धार होनेसे आस पास के ग्रामों को भी बडी भारी सुविधा हो गई है। यहाँ से आवश्यक सहायता भी चाहने पर पहुँचाई जा सकते हैं। उदाहरण स्वरूप—

(१) बाला* ग्राम में मन्दिरजी की प्रतिष्टा हुई उस समय कापरड़ा, तीर्थ से पर्याप्त सहायता पहुँची थी।

(२) कोसाणा के मन्दिर जो जोधपुरनिवासी भंडारी चंनणचन्दजी साबकी पूर्ण प्रेरणासे हालही में निर्माण हुआ जिस का अधूरा काम इस तीर्थ द्वारा सम्पूर्ण कराया गया।

(३) पालासणी के मन्दिरजी पर ध्वजा दंड चढ़ाने में आवश्यक सहायता यहाँ से दी गई।

(४) चौपड़ा के मन्दिर की मूर्त्ति चल थी। यहाँ की सहायता से वह अचल करवाई गई।

इस के अतिरिक्त और भी आसपास के ग्रामों के मन्दिरों में किसी प्रकारकी शक्य सहायता की आवश्यक्ता हो तो यह पेढी सर्वदा तैयार है।

---

* बाला ग्राम के जिनालय के विवरण जानने के लिये 'बालाग्रममें प्रतिष्टा महोत्सव' नाम की किताब को अवश्य पढिये।

पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय इतिहासप्रेमी मुनिश्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब रचित या आपश्री के सदुपदेश से श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला फलोदी या अन्य संस्थाए द्वारा आज पर्यन्त निम्नलिखित कूल १२५ पुस्तके की संख्या २८९००० तथा ७२००० इस्तिहार प्रकाशित हुआ जिनके जरिये जैन समाजमें ज्ञानप्रचार या अनेक प्रकार के सुधार हुए।

पुस्तकों का सूचीपत्र.

तत्वज्ञान विषय की पुस्तके।

१	शीघ्रबोध भाग १ ला	१॥) (१-५)
२	,, ,, २ रा	
३	,, ,, ३ रा	
४	,, ,, ४ था	
५	,, ,, ५ वाँ	
६	शीघ्रबोध भाग ६ वाँ	१।) (६-१०)
७	,, ,, ७ वाँ	
८	,, ,, ८ वाँ	
९	,, ,, ९ वाँ	
१०	,, ,, १० वाँ	
११	शीघ्रबोध भाग ११ वाँ	।)
१२	,, ,, १२ वाँ	।)
१३	,, ,, १३ वाँ	।)
१४	,, ,, १४ वाँ	।)
१५	,, ,, १५ वाँ	।)
१६	,, ,, १६ वाँ	।)
१७	,, ,, १७ वाँ	४) (१७-२२)
१८	,, ,, १८ वाँ	
१९	,, ,, १९ वाँ	
२०	,, ,, २० वाँ	
२१	,, ,, २१ वाँ	
२२	,, ,, २२ वाँ	
२३	,, ,, २३ वाँ	।।।) (२३-२५)
२४	,, ,, २४ वाँ	
२५	,, ,, २५ वाँ	
२६	छ कर्म ग्रन्थ हिन्दी अनुवाद	।)
२७	नय चक्रसार हिन्दी अनुवाद	।=)
+२८	दशवैकालिक मूल सूत्र	=)
२९	नन्दीसूत्र मूल पाठ	।)
+३०	सुखविपाक सूत्र मूल पाठ	≡)
३१	समवसरण प्रकरण हिन्दी	भेट
३२	द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवेशिका	=)
३३	द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका	=)
३४	कायापुरपट्टनका पत्र	)॥।
३५	जड़ चैतन्य संवाद	=)

ऐतिहासिक पुस्तकें ।

१ जैन जाति निर्णय प्रथमाङ्क ।)
२ जैन जाति निर्णय द्वितीयाङ्क ...
३ जैन जातियोंका सचित्र इतिहास ।)
४ ओसवाल जाति समय निर्णय ≡)
५ उपकेश वंश का पद्यमय इतिहास -)
६ उपकेश गच्छ लघु पट्टावली -)
७ जैन जातियों की प्राचीनावार्चीन दशा पर प्रश्नोत्तर (ऐतिहासिक) ≡)
८ प्राचीन छन्द गुणावली भाग १ला =)
९ ,, ,, ,, ,, २रा =)
१० ,, ,, ,, ,, ३रा ≡)
११ ,, ,, ,, ,, ४था =)
१२ ,, ,, ,, ,, ५वाँ
१३ ,, ,, ,, ,, ६ठा =)
१४ जगडुशाह का इतिहास -)
१५ गोड़वाड़ के मूर्त्तिपूजक और सादड़ी के ढुंकामत का ३५० वर्ष का इतिहास ।)
१६ जैन जाति महोदय प्रक. १ ला
१७ ,, ,, ,, ,, २ रा
१८ ,, ,, ,, ,, ३ रा
१९ ,, ,, ,, ,, ४ था
२० ,, ,, ,, ,, ५ वाँ
२१ ,, ,, ,, ,, ६ वाँ
(१६–२१) ४)
२२ समरसिंह एक प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थ (सचित्र) १।)
२३ कापरड़ाजी तीर्थका इतिहास
२४ बालाश्रम में प्रतिष्ठा महोत्सव
२५ शेठ सुदर्शन का कवित =)

चर्चा विषयक पुस्तकें ।

१ प्रतिमा छत्तिसी ०॥
२ गयवर विलास ।)
३ दान छत्तिसी ०॥
४ अनुकम्पा छत्तिसी ०॥
५ प्रश्नमाला -)
+६ चर्चाका पब्लिक नोटिस भेट
७ लिंगनिर्णय बहत्तरी -)
८ सिद्धप्रतिमा मुक्तावली ॥
+९ बत्तीस सूत्र दर्पण ≡)
+१० डंकेपर चोट भेट
११ विनती शतक -)
+१२ आगम निर्णय प्रथमाङ्क =)
१३ कागज हुंडी पेठ परपेठ मेझरनामो गुजराती ,, =)
१४ ,, ,, ,, हिन्दी ,, ।)
१५ तीन निर्नामा लेखोंका उत्तर भेट
१६ अमे साधु शा माटे थया ? ,,
+१७ हितशिक्षा (प्रश्नोंके उत्तर) ,,
१८ विवाह चूलिका की समालोचना =)
१९ मुखवस्त्रिकानि० का निरीक्षण ०॥
+२० निराकरण निरीक्षण भेट
२१ ए० प्र० तस्करवृत्तिका नमूना -)
२२ धूर्तपंचोंकी क्रान्तिकारी पूजा ०)०॥
२३ वालीके फैसले भेट

भक्ति—विधि—उपदेश.

१	स्तवन संग्रह भाग १ ला	=)
२	,, ,, ,, २ रा	=)
३	,, ,, ,, ३ रा	=)
४	,, ,, ,, ४ था	=)
५	,, ,, ,, ५ वां	≡)
६	देवगुरु वन्दन माला	-)
७	दादासाहिब की पूजा	भेट
८	चैत्यवन्दनादि	=)
९	जिनस्तुति	-)
१०	प्रभु पूजा	-)
११	तीर्थ यात्रा, स्तवन	भेट
+१२	आनन्दघन चौवीसी	,,
१३	मुनि नाममाला	=)
१४	नौपद आनुपूर्वी	-)
१५	नित्य स्मरण पाठमाला	।)
१६	राइदेवसि प्रतिक्रमण	=)
१७	पंच प्रतिक्रमण मूल सूत्र	।)
+१८	पंच प्रतिक्रमण विधि सहित	भेट
१९	जैन नियमावली	)०॥
२०	सुबोध नियमावली	-)
२१	जिन (मन्दिरों) की ८४ आशातनाएँ	०।

२२	जैन दीक्षा	-)
२३	स्वाध्याय गहुंली संग्रह	-)
२४	व्याख्या विलास भाग १ ला	=)
२५	,, ,, ,, २ रा	=)
२६	,, ,, , ३ रा	=)
२७	,, ,, ,, ४ था	=)
२८	कक्का बत्तीसी सार्थ	।)
२९	वर्णमाला बालपोथी	भेट
३०	तीन चातुर्मास का दिग्दर्शन	,,
३१	भाषण संग्रह भाग १ ला	≡)
३२	,, ,, ,, २ रा	-)
३३	गुणानुराग कूलक	=)
३४	शुभ मुहूर्त व शकुनावली	≡)
३५	जिनगुण भक्ति बहार	≡)
३६	धर्म्मवीर शेठ जिनदत्त (कथा)	≡)
३७	महासती सुरसुन्दरी (कथा)	≡)
३८	दो विद्यार्थियों का संवाद (शिक्षा)	≡)
३९	अर्द्ध भारत की समस्या	≡)
४०	उगता राष्ट्र (बालसेना)	-)
४१	ओशिया ज्ञान भण्डार का सूचीपत्र	भेट
४२	मुनि ज्ञानसुन्दर	भेट

कूल २८५००० पुस्तकें छप चूकी हैं संस्था का कार्य भविष्य के लिये भी चालु हैं।

+ चिह्नवाली पुस्तकें अप्राप्य है ।

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी के सद्उपदेश से स्थापित संस्थाएं।

संख्या.	संस्थाओं के नाम.	स्थान.	संवत्.
१	जैन बोर्डिंग	ओशिया तीर्थ	१९७२
२	जैन पाठशाला	फलोधी	१९७२
३	श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला	,,	१९७२
४	श्री जैन लायब्रेरी	,,	१९७३
५	श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला	ओशिया तीर्थ	१९७३
६	श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानभण्डार	,,	१९७६
७	श्री कक्ककान्ति लायब्रेरी	,,	१९७६
८	श्री जैन नवयुवक प्रेममण्डल	फलोधी	१९७७
९	श्री रत्नप्रभाकर प्रेम पुस्तकालय	,,	१९७९
१०	श्री जैन नवयुवक मित्रमण्डल	लोहावट	१९८०
११	श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा	,,	१९८०
१२	श्री वीर मण्डल	नागोर	१९८१
१३	श्री मारवाड़ तीर्थ प्रबन्धकारिणी कमेटी	फलोधीतीर्थ	१९८१
१४	श्री ज्ञानप्रकाशक मण्डल	रूण	१९८१
१५	श्री ज्ञानवृद्धि जैन विद्यालय	कुचेरा	१९८१
१६	श्री महावीर मित्र मण्डल	,,	१९८१
१७	श्री ज्ञानोदय जैन पाठशाला	खजवाणा	१९८१

१८	श्री जैन मित्रमण्डल	खजवाणा	१९८१
१९	श्री रत्नोदय ज्ञानपुस्तकालय	पीसांगण	१९८२
२०	श्री जैन पाठशाला	बीलाडा	१९८२
२१	श्री ज्ञानप्रकाशक मित्रमण्डल	,,	१९८२
२२	श्री जैन मित्रमण्डल	पीपाड़	१९८३
२३	श्री ज्ञानोदय जैन लायब्रेरी	,,	१९८३
२४	श्री जैन श्वेताम्बर सभा	,,	१९८३
२५	श्री जैन लायब्रेरी	वीसलपुर	१९८३
२६	श्री जैन श्वेताम्बर मित्रमण्डल	खारिया	१९८४
२७	श्री जैन श्वेताम्बर ज्ञान लायब्रेरी	सायरा (मेवाड)	१९८४
२८	श्री जैन कन्याशाला	सादड़ी	१९८४
२९	श्री जैन कन्याशाला	लुणावा	१९८५
३०	श्री जैन बोर्डींग	सादड़ी मारवाड़	१९८६
३१	श्री जैन श्वेताम्बर लायब्रेरी	पाली मारवाड़	१९८६
३२	श्री जैन ऐतिहासिक ज्ञानभंडार	जोधपुर	१९८६
३३	३३ श्री जैन कन्याशाळा	पाली (मारवाड)	१९८७
३४	३४ श्री पार्श्वनाथ ज्ञान भण्डार	कापरड़ा तीर्थ	१९८७

समाज सुधार और ज्ञानप्रचार के लिये आपश्री का प्रयत्न प्रशंसापात्र हैं, हम मरूधरवासी ऐसे महात्माओं का सहृदय सन्मान और सत्कार कर आशा रखते हैं कि आप श्रीमान् चिरकाल इसी माफीक शासन की सेवा करते रहैं। इत्यलम्।

आप पढ़ो, मित्रों को पढ़ाओ और ज्ञान प्रचार करो.

ऐतिहासक महा पुरुष वीरवर

" समरसिंह "

जिसको पढ़ने से आपको अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के साथ २ ओसवाल जातिकी उत्पत्ति और उन्नति का ज्ञान सहज ही में हो जायगा। हिन्दी संसार के लिये यह दलदार सचित्र अपूर्व ग्रन्थ है। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई पृष्ट ३०० चित्र १० होने पर भी मूल्य १।

जैन जाति महोदय (सचित्र) इसमें केवल जैन जातियों का ही नहीं पर जैन धर्म का सच्चा इतिहास बड़े ही शोध खोज और परिश्रम कर तैयार करवाया है पृष्ट १०५० चित्र ४१ रेशमी जिल्द होनेपर भी ज्ञान प्रचारार्थ मूल्य मात्र रु०४)

शीघ्रबोध भाग १ से २५ जिसमें जैनशास्त्रों का तत्वज्ञान और बारह सूत्रों का हिंदी भाषांतर है मूल्य रू० ९)

कायापुर पट्टन का पत्र. यह आत्मकल्यान के लिये सुन्दर साधन है। मूल्य तीन पैसा १०० नकलों के रु० ४)

जड़ चैतन्य का सम्बाद. यह कविता जैसी मनोरंजक है वैसी बोधदायक भी हैं पृष्ट संख्या ६४ होनेपर भी मूल्य ≈)

पूर्वोक्त पुस्तकें मंगाने वालों को तीन पुस्तकें भेट मिलेगी।

ग्रन्थ पुस्तकों के लिये सूचीपत्र तैयार है
११-८-३१

पता—ऐम. श्रीपाल एण्ड कम्पनी,
जोधपुर—राजपूताना,

तीर्थ पर स्वल्प दान का भी

महाफल ।

आप सज्जन मारवाड़ के तीर्थोंकी यात्रा करते समय इस भव्य मनोहर रमणीय तीर्थ की यात्रा को भी स्मरण रखें यहाँ की यात्रा करनेसे आपका दिल बहुत प्रसन्न होगा ।

× × × ×

जीर्णोद्धार प्रेमियों को चाहिये कि जिस समय अपनी चञ्चल लक्ष्मी का सदुपयोग करें उस समय इस प्राचीन तीर्थका जीर्णोद्धार को भी ध्यानमें रखें; कारण जहाँ ज्यादा जरूरत हैं वहाँ द्रव्य-व्यय करनेसे विशेष लाभ होता हैं ।

× × × ×

पुस्तकें भेट करते समय इस तीर्थ पर श्री पार्श्वनाथ ज्ञान-
भण्डार को स्मखिये ... यान है । यात्रा
करनेको मणीय तीर्थ की यात्रा को भी स्मरण रखें य पसंद करते
हैं वास्ते पुपका दिल बहुत प्रसन्न होगा । मिल सके ।

× × × ×

पत्र-व्यवहार को र प्रेमियों को चाहिये कि जिस सम

शेठ आनन्दजी कल्याणजी (तीर्थ कापरडाजी)

ठी० शा. जुगराजजी कटारिया

पोस्ट-पीपाड़ सीटी (**मारवाड**)